आईएसएएए
इंटरनेशनल सर्विस फॉर
द एक्विजिशन ऑफ
एग्रोबायोटैक एप्लीकेशंस

सार–संक्षेप

संक्षेप–41
व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009

लेखकः

डा. क्लाइव जेम्स,

संस्थापक और अध्यक्ष, आईएसएएए निदेशक–मंडल

लेखक द्वारा आईएसएएए के प्रथम संस्थापक–संरक्षक शांति के नोबल पुरस्कार विजेता डा. नॉर्मन बोरलोग की पुण्य स्मृति को समर्पित

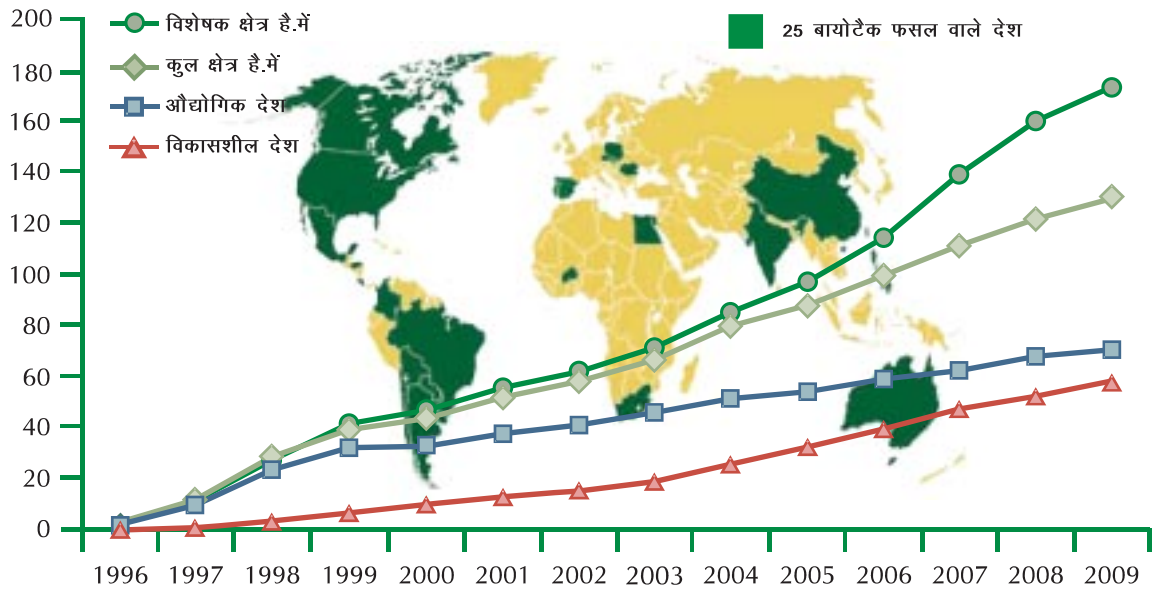

सन् 2009 में 25 देशों के 1400 लाख किसानों ने 1340 लाख हैक्टर (3300 लाख एकड़) में बायोटैक फसलें बोईं, जो कि एक रिकार्ड है और 2008 के मुकाबले 7 प्रतिशत यानी 90 लाख हैक्टर (220 लाख एकड़) की सार्थक वृद्धि हुई।

स्रोतः डा. क्लाइव जेम्स, 2009

नं0 41 – 2009

लेखक की टिप्पणी

बायोटैक फसलों की बुआई के वैश्विक आंकड़े निकटतम 100,000 हैक्टर तक पूरे करके दिखाए गए हैं और इसके लिए < और > प्रतीक इस्तेमाल किए गए हैं, जिसका मतलब यह है कि कुछ कम या कुछ ज्यादा हो सकते हैं। कुछ मामलों में यह मामूली अंतर हो सकते हैं और आंकड़ों में, जोड़ में और प्रतिशत के पूर्वानुमानों में मामूली हेरफेर हो सकते हैं, क्योंकि वे पूरा करने पर ठीक–ठाक 100 प्रतिशत बैठें, यह जरूरी नहीं। यहां यह भी ध्यान देने योग्य है कि दक्षिणी गोलार्द्ध के देश कलेंडर वर्ष की अंतिम तिमाही में अपनी जाड़े की फसलें बोते हैं। यहां हमने बायोटैक फसलों को बोने के आंकड़े दिए हैं, जो यह जरूरी नहीं कि फसलों की कटाई के बाद की पैदावार के आंकड़ों के अनुरूप हों। उदाहरण के लिए अर्जेंटिना, ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका और उरूग्वे की 2009 की जानकारी, 2009 की अंतिम तिमाही में बोए गए क्षेत्र के आंकड़े दर्शाती हैं। इन फसलों की कटाई तो 2010 की पहली तिमाही में होगी। कुछ देश जैसे कि फिलीपींस में प्रति वर्ष फसलों के एक से अधिक मौसम होते हैं। अतः गोलार्द्ध के ब्राजील और अर्जेंटिना जैसे देशों के लिए जो पूर्वानुमान हैं, वे अंतिम नहीं हैं। मौसमी घटबढ़ से वास्तविक बुआई और कटाई में फर्क पड़ सकता है। इस सार–संक्षेप के मुद्रण के लिए जाने तक बुआई का मौसम खत्म न भी हुआ हो, तो जो जानकारी तब तक बोए गए क्षेत्र के बारे में उपलब्ध थी, वही दी जा सकी है। ब्राजील में जाड़ों की फसल को 'साफ्रिन्हा' कहते हैं और दिसंबर 2009 के अंतिम सप्ताह में इसकी बुआई शुरू होती है और आगे जनवरी–फरवरी तक और भी सघनता से चलेगी। हमने इस सार–संक्षेप के लिए यह नीति बनाई है कि बुआई की पहली तिथि ही उस फसल–वर्ष को निर्धारित करेगी। इस सार–संक्षेप से संबंधित संदर्भों का विस्तार से संपूर्ण विवरण संक्षेप–41 में दिया गया है।

सार–संक्षेप

संक्षेप–41
व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009

लेखकः

डा. क्लाइव जेम्स
संस्थापक और अध्यक्ष, आईएसएएए निदेशक–मंडल

लेखक द्वारा आईएसएएए के प्रथम संस्थापक–संरक्षक शांति के नोबल पुरस्कार विजेता
डा. नॉर्मन बोरलोग की पुण्य स्मृति को समर्पित

सह प्रायोजकः आईएसएएए
फोण्डाजिओन बुरोलेरा ब्रांका, इटली
इबेरकाखा, स्पेन

आईएसएएए इस 'समीक्षा' के निर्माण, विकासशील देशों में इसके निःशुल्क वितरण के लिए फोण्डाजिओन बुसोलेरा ब्राका तथा (इबेरकाखा, स्पेन) का आभारी है। इसका उद्देश्य वैज्ञानिक समुदाय और समाज को बायोटैक/जीनांतरित फसलों के बारे में सूचना और ज्ञान उपलब्ध कराना है। ताकि विश्व की खाद्यान्न, पशुदाना और रेशा–तथा अधिक टिकाऊ खेती में बायोटैक फसलों की संभावित भूमिका के बारे में अधिक तर्कसंगत और पारदर्शी चर्चा करना आसान हो। इस प्रकाशन में व्यक्त विचारों के लिए या किसी भी भूल या त्रुटिपूर्ण व्याख्या के लिए सह–प्रायोजक नहीं, बल्कि लेखक जिम्मेदार हैं।

प्रकाशकः द इण्टरनेशल सर्विस फॉर द एक्विजिशन ऑफ एग्री–बायोटैक एप्लीकेशंस (आईएसएएए)

कॉपीराइटः (आईएसएएए 2009) इण्टरनेशनल सर्विस फॉर द एक्विजिशन ऑफ एग्री–बायोटैक एप्लीकेशंस शैक्षिक तथा अन्य गैर–व्यावसायिक उद्देश्य से इस प्रकाशन का कॉपीराइट के स्वामी की अनुमति के बिना उपयोग/पुनःप्रकाशन कर सकते हैं, बशर्ते कि स्रोत का उचित रूप से आभार व्यक्त किया जाए।

फिर से बिक्री या व्यावसायिक उद्देश्य के लिए इसका पुनःप्रकाशन तभी किया जा सकता है जब कॉपीराइट के स्वामी की लिखित अनुमति ली गई हो।

उद्धरणः जेम्स,सी. 2009. ग्लोबल स्टेटस ऑफ कमर्शियलाइज्ड बायोटैक/जीएम क्रोप्स, आईएसएएए सार–संक्षेप सं.41. आईएसएएए; इथाका, न्यूयार्क।

आईएसबीएनः 978–1–892456–48–6

इस प्रकाशन का आर्डर देने के लिए तथा मूल्यः कृपया आईएसएएए एस ई एशिया सेण्टर से सम्पर्कक करें या b.choudhary@cgiar.org पर ई–मेल करें। सार संक्षेप सं. 41 के पूर्ण संस्करण और एक्जीक्यूटिव सार–संक्षेप का कूरियर से एक्सप्रेस डिलीवरी सहित यूएस डॉलर 50 विकासशी देशों के नागरिकों के लिए डाक द्वारा निःशुल्क उपलब्ध।

आईएसएएए एस एशिया कार्यालय
द्वारा आई.सी.आर.आई.एस.ए.टी.
राष्ट्रीय कृषि विज्ञान केन्द्र, देव प्रकाश शास्त्री मार्ग,
टोडापुर, नई दिल्ली–110012

आईएसएएए के बारे में सूचनाः

आईएसएएए एमेरीसेण्टर
417, ब्राडफील्ड हाल
कॉर्नेल यूनिवर्सिटी,
इथाका, न्यूयार्क 14853
यू.एस.ए.

आईएसएएए अफ्रीसेण्टर
पीओ–70
ILRI Campus
नैरोबी,
केन्या

आईएसएएए एसईएशिया सेण्टर,
द्वारा इर्री,
डीएपीओ बाक्स 7777.
मैट्रो मनीला,
फिलिपीन्स

इलैक्ट्रॉनिक सूचनाः सभी आईएसएएए ब्रीफस की एक्जीक्यूटिव समरी के लिए कृपया b.choudhary@cgiar.org पर सम्पर्क करें।

सार–संक्षेप

व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009
प्रथम चौदह वर्ष, 1996 से 2009

विषय–सूची

परिचय 1

चीन ने बीटी धान और फाइटेज मक्का को स्वीकृति प्रदान करने का अभूतपूर्व निर्णय लिया 1

2050 में दुनिया का पेट भरने की चुनौती 2

परंपरागत कृषि प्रौद्योगिकी और फसलों की जैव प्रौद्योगिकी दोनों के अनुप्रयोगों से कृषि–उत्पादन को बढ़ाकर 'फसल–उत्पादकता का ठोस और टिकाऊ सघनीकरण' 3

2009 में विश्व में बायोटैक फसलों के बुआई के क्षेत्र में बढ़त जारी रही– चार प्रमुख बायोटैक फसलों के क्षेत्र में रिकार्ड वृद्धि हुई– अन्य मोर्चों पर भी प्रगति 3

2009 में 1340 लाख हैक्टर में बायोटैक फसलें, तेजी से अपनाई जा रही प्रौद्योगिकी, 1996 से 2009 के दौरान 80 गुनी बढ़त, साल दर साल वृद्धि–दर 90 लाख हैक्टर या 7 प्रतिशत 4

11 देशों में पुंजित विशेषक वाली बायोटैक फसलें बोई गईं–11 देशों में से 8 विकासशील देश थे 6

बायोटैक फसलें उगाने वाले किसानों की संख्या 2008 में 7 लाख की बढ़त से 2009 में 140 लाख हो गई और इनमें से 90 प्रतिशत यानी 130 लाख विकाशसील देशों के छोटे, साधनहीन किसान थे 6

सन् 2009 में 25 देशों ने बायोटैक फसलें उगाईं–इनमें से 10 मध्य अमरीका और दक्षिण अमरीका में थे 6

हालांकि सन् 2008 में बायोटैक फसलों का प्रतिशत काफी ऊंचा था, फिर भी सन् 2009 में बायोटैक फसलों का क्षेत्र बढ़ा 7

ब्राजील ने बायोटैक फसलें उगाने में विश्व के दूसरे स्थान से अर्जेंटिना को हटाकर, उसकी जगह ले ली 7

भारत को बीटी कपास से 2002 से 2009 तक के 8 सालों में शानदार फायदा पहुंचा और अब भारत की पहली बायोटैक खाद्य फसल बीटी बैंगन को व्यापारीकरण के लिए अनुमोदित किया गया.... 9

अफ्रीका में दक्षिण अफ्रीका, बर्किना फासो और ईजिप्ट में प्रगति जारी 9

विकासशील देशों ने वैश्विक बायोटैक फसलों में अपनी हिस्सेदारी 50 प्रतिशत तक बढ़ाई और आशा है कि वे भविष्य में अपने–अपने यहां बायोटैक क्षेत्र लगातार बढ़ाते जाएंगे। 10

सन् 2009 में यूरोपी संघ में बीटी मक्का का स्तर–छह ई यू देशों ने 2009 में 94,750 हैक्टर में बीटी मक्का बोई 11

फसलों के अनुसार अपनाने की दर 11

विशेषक (ट्रेट) के अनुसार अपनाने की दर 11

सन् 2009 में RR® चीनी चुकंदर (शुगरबीट) को अपनाने की दर अमरीका और कनाडा में तीसरे साल में ही 95 प्रतिशत पर पहुंच गई और अब तक यह सबसे तेजी से अपनाई जा रही बायोटैक फसल का दर्जा पा चुकी है 12

सन् 1996 से 2009 के दौरान कुल मिलाकर बायोटैक फसलों का क्षेत्र लगभग एक अरब हैक्टर की सीमा तक पहुंच गया 12

पहली पीढ़ी की बायोटैक फसलों की जगह आ रही हैं दूसरी पीढ़ी की अधिक उपज वाली फसलें 13

''व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009''

आर्थिक प्रभाव 13
कीटनाशियों के इस्तेमाल में कमी 14
कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में कटौती 14
खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता और खाद्य सुरक्षा 14
विश्व की आधी से अधिक आबादी 25 देशों में रहती है, जहां बायोटैक फसलें कुल मिलाकर 1340 लाख हैक्टर में उगाई जा रही हैं और उस तरह दुनिया की कुल 150 करोड़ हैक्टर (डेढ़ अरब हैक्टर) कृषि भूमि में से 9 प्रतिशत भूमि में बायोटैक फसलें लहलहा रही हैं 15
बायोटैक फसलों से प्राप्त खाद्य–उत्पादों की खपत 15
विश्व के 25 देशों ने अपने यहां बायोटैक फसलें उगाने की स्वीकृति दी और 32 देशों में बायोटैक फसलें और उनके उत्पाद आयात किए जा रहे हैं, यानी विश्व के 57 देशों ने बायोटैक फसलें या उनके उत्पाद स्वीकार किए हैं और उन्हें इस्तेमाल कर रहे हैं 15
राष्ट्रीय आर्थिक विकास में वृद्धि–बायोटैक फसलों का संभावित योगदान 16
2009 में विश्व में बायोटैक बीजों का बाजार ही 10.5 अरब डालर का हो चुका है और व्यापारिक बायोटैक मक्का, सोयाबीन के दाने और कपास की कीमत 2008 में 130 अरब डालर कूती गई थी 16
बायोटैक फसलों की भावी संभावनाएं–2010–2015 16
1. प्रभावशाली और उत्तरदायी नियामक प्रणाली 17
2. बायोटैक फसलों के विकास, स्वीकृति और उन्हें अपनाने के लिए राजनीतिक, वित्तीय तथा वैज्ञानिक प्रोत्साहन 17
3. क्या देशों, किसानों और क्षेत्र के अनुसार बायोटैक फसलों को अपनाने की वैश्विक दर सन् 2015 तक दुगुनी हो जाएगी और क्या प्राथमिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उचित बायोटैक फसलों का विस्तार किया जा सकेगा? 22
- चीन ने बायोटैक धान और मक्का को स्वीकृति प्रदान की 23
- स्मार्टस्टैक्स™ 25
- भारत में बीटी बैंगन 26
- गोल्डन राइस 27
- सूखा सह्यता –सन् 2012 में अमरीका में और 2017 में अफ्रीका के उप सहारा क्षेत्र में सूखा सह मक्का की खेती शुरू होने की आशा है। विश्व में सन् 2009 में सूखे की स्थिति का विहंगावलोकन 29
- नाइट्रोजन के उपयोग की दक्षता (एन यू ई) 32
- क्या बायोटैक गेहूं–निकट भविष्य में ही आने वाला है 32
- औद्योगिक देशों में बायोटैक–गेहूं 34

अन्य फसलें और विशेषक (ट्रेट) 34
जैव ईंधन (बायोफ्यूअल) 34
विश्व में क्षेत्रानुसार प्रगति 34
बायोटैक फसलों का उत्तरदायित्वपूर्ण प्रबंधन 35
विकट चुनौती 36
उपसंहार और डा. नॉर्मन बोरलोग की विरासत 36

''व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009''
प्रथम चौदह वर्ष, 1996 से 2009

परिचय

इस सार–संक्षेप में 2009 में बायोटैक फसलों के वैश्विक स्तर का विवरण दिया गया है। इस बारे में विस्तृत ब्यौरा संक्षेप–41 में उपलब्ध है, जो कि नोबल पुरस्कार विजेता दिवंगत डा. नॉर्मन बोरलोग को समर्पित किया गया है। डा. नॉर्मन बोरलोग आई एसएएए के प्रथम संस्थापक–संरक्षक थे। उनका निधन 12 सितंबर 2009 को हुआ था। सार–41 में उनको श्रद्धांजलि के रूप में एक स्मारिका भी संलग्न की गई है। साठादिक में हरितक्रांति के प्रसार से लगभग 100 करोड़ लोगों को भुखमरी से बचाने की सफलता के लिए डा. बोरलोग को शांति के नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। नॉर्मन बोरलोग विश्व में बायोटैक फसलों के बड़े उत्कट और विश्वसनीय समर्थक थे और यह मानते थे कि बायोटैक फसलें दुनिया से गरीबी, भूख और कुपोषण समाप्त कर सकती हैं।

इस सार में 'बायोटैक धान–वर्तमान स्तर और भावी संभावनाएं' शीर्षक से एक विशेष आलेख भी शामिल किया गया है, जिसे डा. जॉन बेनट ने लिखा है। डा. बेनट आस्ट्रेलिया की सिडनी यूनिवर्सिटी के स्कूल ऑफ बायोलोजीकल साइंस में ऑनरेरी प्रोफेसर हैं और इससे पहले फिलिपींस के इंटरनेशनल राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट में प्लांट मोलीक्यूलर बायोलोजी के सीनियर मोलीक्यूलर बायोलोजिस्ट रह चुके हैं। इर्री में ही 'आईएसएएए' का दक्षिण पूर्व एशिया का केंद्र है।

चीन ने बीटी धान और फाइटेज मक्का को स्वीकृति प्रदान करने का अभूतपूर्व निर्णय लिया

हम यह सार–संक्षेप मुद्रण के लिए भेजने वाले ही थे कि हमें यह समाचार मिला कि चीन ने 27 नवम्बर 2009 को बीटी धान और फाइटेज मक्का को स्वीकृति प्रदान कर दी। ये स्वीकृति अत्यंत सामयिक और महत्वपूर्ण है और इसका सकारात्मक प्रभाव केवल चीन और एशिया में ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व में बायोटैक फसलों को अपनाने पर पड़ेगा। इस निर्णय के ऐसे अनेक पहलू हैं, जो इसे अनूठा बनाते हैं:

- ये दोनों ही बायोटैक फसलें चीन में राष्ट्रीय स्तर पर विकसित की गईं और इन पर चीन का स्वामित्व है और इनके विकास में चीन की सरकार का ही पूर्ण योगदान है।
- चावल विश्व का सबसे महत्वपूर्ण खाद्यान्न है। बी टी धान अकेले चीन में प्रतिवर्ष वहां के 1100 लाख धान उत्पादक परिवारों को लगभग 4 अरब अमरीकी डालर का लाभ पहुंचायेगा। यदि एक परिवार के चार सदस्य भी मान लें तो कुल मिलाकर 4400 लाख लाभार्थी बनते हैं। ये किसान 300 लाख हैक्टर में धान की खेती करते हैं। धान का हर खेत वहां औसतन एक तिहाई हैक्टर का होता है। अतः बी टी धान से पैदावार बढ़ने का यह फायदा होगा कि इन किसानों का जीवन स्तर सुधरेगा और कीटनाशियों पर निर्भरता कम होने से पर्यावरण में भी टिकाऊ आधार पर सुधार होगा। राष्ट्रीय स्तर पर यह चीन के खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता के और खाद्य–सुरक्षा के लक्ष्य की पूर्ति की दिशा में एक बड़ा महत्वपूर्ण योगदान है। ये दोनों लक्ष्य अन्योन्याश्रित नहीं हैं। चीन की खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता का मतलब है घरेलू स्तर पर पर्याप्त खाद्यान्न और पशु आहार पैदा करना तथा खाद्य सुरक्षा का अर्थ है सबके लिए पर्याप्त खाद्य और पशु आहार की आपूर्ति।
- मक्का विश्व का प्रमुख पशु आहार है। चीन में मक्का की खेती 300 लाख हैक्टर में की जाती है और 1000 लाख परिवार मक्का उत्पादक हैं। यानी 4000 लाख व्यक्ति लाभान्वित होंगे। मक्का के एक खेत का औसत क्षेत्र चीन में एक हैक्टर का एक तिहाई है। फाइटेज मक्का का संभावित लाभ यह होगा कि चीन में सूअर का मांस अधिक कारगर ढंग से पैदा किया जाएगा। चीन में वैसे भी दुनिया के सबसे ज्यादा सूअर रहते हैं और उनकी संख्या 5000 लाख है, यानी दुनिया के आधे सूअर चीन में ही हैं। फाइटेज मक्का खिलाने से सूअरों का मांस अधिक कारगर ढंग से इसलिए तैयार होगा क्योंकि सूअर फास्फोरस को आसानी से हजम कर सकेंगे और पशु छीजन में फॉस्फेट की मात्रा कम होगी और सूअर की वृद्धि भी जल्दी और अच्छी होगी तथा प्रदूषण भी कम होगा। अब सूअर पालकों को उनके आहार में अलग से खरीदकर फॉस्फेटी पूरक दाने मिलाने की जरूरत नहीं होगी। इस तरह बाजार से पूरक आहार नहीं खरीदना पड़ेगा और इसे मिलाने के उपकरण तथा श्रम की भी बचत होगी। चीन में समृद्धि बढ़ने से मांसाहार बढ़ रहा है और वहां पशु आहार में मक्का के दाने की मांग बढ़ रही है, अतः मांस का कारगर उत्पादन राष्ट्रीय स्तर पर चीन के लिए बहुत महत्व रखता है। अभी उसे काफी मक्का बाहर से मंगाने पड़ती है। मक्का का इस्तेमाल चीन में 13 अरब मुर्गे, मुर्गियों और बतखों को दाना डालने के लिए भी किया जाता है।

- चीन ने बायोटैक धान और मक्का को जो स्वीकृति दी है उसका असर खासतौर से विकासशील देशों में यह पड़ेगा कि वे भी बायोटैक धान और मक्का तथा अन्य बायोटैक फसलों को स्वीकृति देने का निर्णय लेने में अनावश्यक विलंब नहीं करेंगे और स्वीकृति प्रदान करने में हिचकेंगे नहीं। खासतौर से एशिया के देशों पर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा क्योंकि ये देश भी चीन की तरह ही खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता की चुनौतियों का सामना कर रहे हैं और इन्हें भी संयुक्त राष्ट्र के सहस्राब्दी विकास लक्ष्य की भांति दुनिया में गरीबी भूख और कुपोषण को खत्म करने में मदद करनी है और किसानों को समृद्ध बनाना है।
- चीन की बायोटैक धान और मक्का को स्वीकृति देने की यह राष्ट्रीय उपलब्धि इन अत्यंत महत्वपूर्ण फसलों के साथ ही विश्व की अन्य खाद्य फसलों, पशु आहार वाली फसलों और रेशों वाली फसलों के व्यापार को भी प्रभावित करेंगीं। इससे खाद्य सुरक्षा में विकासशील देशों की भूमिका में भी बदलाव आयेगा और दूसरे देश भी चीन के उदाहरण को अपने–अपने यहां दुहराना चाहेंगे या फिर चीन के साथ मिलकर अपने यहां इन बायोटैक फसलों को अपनाना चाहेंगे।

चीन ने अपने यहां फसलों की जैव प्रौद्योगिकी को जो उच्च प्राथमिकता दी है, उसके पीछे वहां के प्रधानमंत्री वेन जिआबाओ का हाथ है और इसका चीन को बीटी कपास अपनाने के साथ रणनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण अन्य फसलों जैसे की बायोटैक धान और बायोटैक मक्का में भी लाभ मिलेगा। यह प्रवृत्ति यह भी दर्शाती है कि चीन में बायोटैक फसलों के विकास की वैज्ञानिक उत्कृष्टता में भी वृद्धि हो रही है। साथ ही चीन में कृषि विज्ञान भी अनुसंधान के क्षेत्र में सबसे तेजी से आगे बढ़ रहा है, जैसा कि इस बात से स्पष्ट होता है कि चीन में कृषि विज्ञान संबंधी वैश्विक प्रकाशनों की वृद्धि–दर जहां 1999 में 1.5 प्रतिशत थी, वहीं 2008 में 5 प्रतिशत तक पहुंच गई। चीन पहले कृषि के जी डी पी का 0.23 प्रतिशत ही कृषि के अनुसंधान और विकास पर खर्च कर रहा था, लेकिन सन् 2008 में यह बढ़कर 0.8 प्रतिशत हो गया और अब लगभग 1 प्रतिशत हो गया, जो कि विश्व बैंक द्वारा विकासशील देशों के लिए की गई सिफारिश के अनुरूप है। चीन की सरकार ने नया लक्ष्य यह निश्चित किया है कि 2020 तक कुल अनाज उत्पादन 5400 लाख टन तक बढ़ाया जाएगा और सन् 2008 में चीनी किसानों की जो आमदनी हो रही थी, उसे 2020 तक दुगना बढ़ाया जाएगा। इस दिशा में बायोटैक फसलों का योगदान बड़ा महत्वूर्ण होगा (जिन्हुआ, 2009 ए)।

दुर्भाग्यवश हमें यह जानकारी देर से मिली और इस संक्षेप को छापना था इसलिए वैश्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण चीन के इस निर्णय पर हम अधिक चर्चा के लायक विशेष जानकारी नहीं जुटा पाए, क्योंकि बायोटैक धान और बायोटैक मक्का को चीन को स्वीकृति दिया जाना बड़ा ही क्रांतिकारी कदम है। अभी इन दोनों फसलों की व्यावसायिक खेती शुरू होने में 2–3 साल लग सकते हैं, क्योंकि अभी तो उनके पंजीकरण की स्वीकृति मिली है और इसके बाद मानक प्रक्षेत्र पंजीकरण के परीक्षण चलेंगे। इस घटना पर हमने इस संक्षेप में आगे भी चर्चा की है।

2050 में दुनिया का पेट भरने की चुनौती

यहां यह उपयोगी होगा कि हम विश्व में खाद्यान्न के उत्पादन के पिछली दो सदियों के परिदृश्य की चर्चा करें और यह देखें कि विगत दो सौ वर्षों में इस क्षेत्र में क्या–क्या महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। 19वीं सदी के प्रारंभ से शुरू करें तो हम देखते हैं कि उस समय विश्व की जनसंख्या सन् 1800 में केवल एक अरब थी और इस तरह अगले 100 साल तक खाद्य उत्पादन बढ़ाना आसान था, क्योंकि इन एक सौ वर्षों में आबादी में केवल 60 करोड़ की बढ़त हुई। **इस तरह हल के नीचे अधिक जमीन लाकर ही इस आबादी का पेट भरा जा सका।** उस समय तमाम उपजाऊ जमीन अनजुती पड़ी थी और उत्तरी अमरीका के हरे भरे घास के मैदान, दक्षिण अमरीका के पैंपा घास स्थल, पूर्वी यूरोप और रूस के हरे मैदान, स्टेपी और आस्ट्रेलिया के आउटबेक यानी पश्चवर्ती इलाकों में हल चलने लगे। 20वीं सदी में भी दुनिया की आबादी सन् 1900 में 160 करोड़ थी। अतः अगले 100 सालों में प्रति हैक्टर उपज यानी फसलों की उत्पादकता बढ़ाकर विश्व का खाद्य उत्पादन बढ़ाया जा सका। इसमें शस्य विज्ञान संबंधी अनेक सुधारों के साथ ही हरितक्रांति का विशेष योगदान रहा। बड़े पैमाने पर खेती का मशीनीकरण हुआ और मशीनों को चलाने के लिए जीवाश्मी ईंधन यानी डीजल और पेट्रोल की खपत बढ़ी। घोड़ों की जगह ट्रैक्टर आ गए और खाद की जगह जीवाश्मी ईंधनों पर आधारित अमोनियम उर्वरकों का उपयोग होने लगा।

अब इक्कीसवीं सदी के प्रारंभ पर दृष्टिपात करें, तो विश्व की जनसंख्या सन् 2000 में 6.1 अरब हो चुकी थी और सन् 2050 तक यह बढ़कर 9.2 अरब हो सकती है। इसलिए सन् 2000 के बाद के 50 सालों में खाद्य उत्पादन दुगना कर देना बड़ी असाधारण चुनौती है। यह चुनौती इसलिए भी बड़ी विकट है कि केवल ब्राजील को छोड़कर अब कहीं भी खेती योग्य भूमि बढ़ाई नहीं जा सकती। पैदावार टिकाऊ आधार पर ही बढ़ानी होगी, जिसमें **संसाधनों का खासतौर से जीवाश्मी ईंधनों, पानी और नाइट्रोजन का कम से कम इस्तेमाल हो। यही नहीं अब एक और बड़ी चुनौती जलवायु परिवर्तन**

की पैदा हो गई है। दूसरे, विश्व के इतिहास में पहली बार एक अरब से अधिक आबादी की गरीबी, भूख और कुपोषण की समस्या को भी मानवीय आधार पर निपटाना होगा। इस समय कृषि प्रौद्योगिकी की दृष्टि से विश्व में खाद्य, पशु आहार और रेशे की उत्पादकता किलोग्राम प्रति हैक्टर बढ़ाने की सबसे अच्छी रणनीति यह होगी कि पुरानी परंपरागत प्रौद्योगिकी का सर्वोत्तम और नई प्रौद्योगिकी का सर्वोत्तम मिला दिया जाए। परंपरागत कृषि प्रौद्योगिकी उपलब्ध किस्मों के जनित्रद्रव्य (जर्मप्लाज्म) में से सर्वोत्तम को लेकर कृषि की जैव प्रौद्योगिकी के उपयोगों में नए विशेषकों सहित सर्वोत्तम का एकीकरण करना होगा। इस समोर्जा से जो एकीकृत फसल उत्पाद प्राप्त हों, उनको विश्व की खाद्य, पशु आहार, रेशा–सुरक्षा की नवाचारी प्रौद्योगिकी का घटक बनाया जाए। इसको जनसंख्या की वृद्धि और खाद्य, पशु आहार तथा रेशों की वितरण प्रणाली से भी जोड़ा जाए, ताकि इन महत्वपूर्ण मुद्दों को भी निपटाया जा सके। इस समय विश्व जिस तरह से खाद्य सुरक्षा से जूझकर विश्व शांति और सुरक्षा के लिए कोशिश करने में लगा है और मानवता इतिहास के बड़े विचित्र मोड़ पर पहुंच गई है, ऐसी स्थिति में एक सर्वांगीण रणनीति अपनाकर परंपरागत और आधुनिक नवाचारी पादप प्रजनन का मेल, इनके अत्यंत उपयोगी योगदान का लाभ दे सकेगा। **यहां यह उल्लेखनीय है कि चालीस सालों पहले शांति का नोबल पुरस्कार ग्रहण करते समय डा. नॉर्मन बोरलोग ने 'हरित क्रांति, शांति और मानवता'** शीर्षक से अपना व्याख्यान देते समय मूलतः यही विचार व्यक्त किए थे।

परंपरागत कृषि प्रौद्योगिकी और फसलों की जैव प्रौद्योगिकी दोनों के अनुप्रयोगों से कृषि–उत्पादन को बढ़ाकर 'फसल–उत्पादकता का ठोस और टिकाऊ सघनीकरण'

'आई एसएएए' संक्षेप–41 का प्रकाशन एक ऐसे विकट समय में हो रहा है जब अनेक प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय संगठन कृषि, खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता और सुरक्षा बढ़ाने तथा गरीबी, भूख और कुपोषण को मिटाने की तात्कालिक आवश्यकता पर पूरा जोर दे रहे हैं। इनमें जी–8 समूह के बड़े देश, 2009 में संपन्न हुई एफ ए ओ की वर्ल्ड फूड समिट, बिल और मेलिंदा गेट्स फाउंडेशन तथा लंदन की रॉयल सोसायटी सहित अनेक संस्थाएं शामिल हैं। **सबसे तेज पुकार यह उठ रही है कि इस समय विश्व में जो डेढ़ अरब हैक्टर जमीन में खेती हो रही है, उसमें परंपरागत और फसलों की जैव प्रौद्योगिकी दोनों के अनुप्रयोगों से कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए फसल–उत्पादकता का ठोस और टिकाऊ सघनीकरण किया जाए।** यह पुकार इसलिए भी उठी है, क्योंकि विश्व में पहली बार 102 करोड़ के लगभग लोग गरीबी, भूख और कुपोषण के कारण होने वाले विनाशकारी प्रभावों के दुख उठा रहे हैं। अतः उनके जीवन को इस खतरे से मुक्त करना होगा। इस खाद्य संकट की वैश्विक गंभीरता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि दुनिया में अनाजों का भंडार केवल इतना है कि उससे केवल 75 दिन तक ही विश्व की जनसंख्या का पेट भरा जा सकता है। जबकि इस अनाज–भंडार की क्षमता कम से कम 100 दिन की अनुमोदित की गई है। जलवायु परिवर्तन की चुनौती ने अनेक ऐसी चुनौतियां पैदा कर दी हैं, जिनसे निपटे बिना बात नहीं बनेगी, जैसे कि सूखे की समस्या जो पूरी दुनिया में गहरा रही है और सबसे आखिर में लेकिन सबसे छोटी नहीं, वह चुनौती है कि प्राकृतिक संसाधनों के आधार को बचाकर भावी पीढ़ियों को सुथरे रूप में लौटाना, फिर भले ही इसके लिए कोई भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े।

2009 में विश्व में बायोटैक फसलों के बुआई का क्षेत्र में बढ़त जारी रही– चार प्रमुख बायोटैक फसलों के क्षेत्र में रिकार्ड वृद्धि हुई– अन्य मोर्चों पर भी प्रगति

पिछले चौदह सालों में बायोटैक फसलों से लगातार मिल रहे ठोस आर्थिक, पर्यावरणीय और मानव कल्याण संबंधी फायदों के मद्देनजर लाखों, छोटे और साधनहीन किसानों ने औद्योगिक और विकासशील देशों, दोनों में सन् 2009 में भी पहले से ज्यादा खेतों में बायोटैक फसलों को बोना जारी रखा। विश्व में बायोटैक फसलों के बेहतर निष्पादन का अत्यंत विश्वसनीय, तर्कसंगत और व्यावहारिक प्रभाण इससे बढ़कर और क्या होगा कि दुनियाभर के लाखों किसानों ने बायोटैक फसलों को अपनाना शुरू कर दिया है। सन् 2009 की वैश्विक आर्थिक मंदी के बावजूद इस वर्ष में सभी बायोटैक फसलों में रिकार्ड क्षेत्र की वृद्धि हुई और चार प्रमुख बायोटैक फसलों का क्षेत्र तो नई बुलंदियों पर पहुंचा। यह पहली बार हुआ कि विश्व में 900 लाख हैक्टर में उगाई जाने वाली सोयाबीन के तीन चौथाई से अधिक क्षेत्र, यानी 77 प्रतिशत पर बायोटैक सोयाबीन का कब्जा हो गया, कपास के 330 लाख हैक्टर वैश्विक क्षेत्र का लगभग आधा (49 प्रतिशत) क्षेत्र बायोटैक कपास ने हथिया लिया, मक्का के 26 प्रतिशत क्षेत्र को बायोटैक मक्का ने घेर लिया और अंत में चौथी प्रमुख बायोटैक फसल कनोला 310 लाख हैक्टर के विश्व क्षेत्र में से 21 प्रतिशत पर छा गई। क्षेत्र में बढ़त के साथ ही बायोटैक फसलों को अपनाने वाले किसानों की संख्या भी बढ़ी। अफ्रीका के सभी तीनों बायोटैक–देशों में ठोस प्रगति जारी रही, क्योंकि वहां कृषि की चुनौतियां सबसे बड़ी हैं। जैसा कि 'आई एसएएए' के इससे पहले के संक्षेपों में पूर्वानुमान बताया गया था, विकासशील देशों ने पूरी दुनिया में बायोटैक फसलें बोने में अधिकाधिक हिस्सेदारी लेना जारी रखा और ब्राजील तो जैसे लैटिन अमरीका में इस क्षेत्र की भावी वृद्धि को

ऊपर खींचने वाला इंजन ही बन गया। ये सब बड़े महत्वपूर्ण परिवर्तन हैं और बायोटैक फसलें पहले ही अपनी विनम्र योगदान दिखा चुकी हैं। आगे भी उनका यह योगदान जारी रहने वाला है, खासतौर से कृषि और खाद्य से जुड़े सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में। जैसे कि खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता और खाद्य–सुरक्षा, सबके बूते का उचित कीमतों वाला खाद्यान्न पैदा करना, टिकाऊपन, गरीबी और भूख का उन्मूलन और जलवायु परिवर्तन तथा धरती के गरमाने से जुड़ी कुछ चुनौतियों से निपटना।

2009 में 134 लाख हैक्टर में बायोटैक फसलें, तेजी से अपनाई जा रही प्रौद्योगिकी, 1996 से 2009 के दौरान 80 गुनी बढ़त, साल दर साल वृद्धि–दर 90 लाख हैक्टर या 7 प्रतिशत

सन् 2009 मे बायोटैक फसलों के वैश्विक क्षेत्र की बढ़त जारी रही और 1340 लाख हैक्टर पर पहुंच गई (सारणी–1 तथा चित्र–1)। यह बढ़त 1800 लाख विशेषक या वास्तविक हैक्टर' के बराबर थी। यानी 'आभासी वृद्धि 90 लाख हैक्टर या 7 प्रतिशत हैक्टर में दर्ज की गई और 'वास्तविक वृद्धि' विशेषक और वर्चुअल वृद्धि के रूप में 140 लाख हैक्टर और साल–दर–साल वृद्धि–दर 8 प्रतिशत दर्ज की गई। 'ट्रेट और वर्चुअल हैक्टर के रूप में इसको नापना वैसे ही है जैसे कि हवाई यात्रा, जहां एक हवाई जहाज में एक से अधिक यात्री होते हैं या अधिक वास्तविक अर्थ में केवल मील की बजाय यात्री–मील में नापना। 'ट्रेट और वर्चुअल वृद्धि' वैश्विक वृद्धि के लिहाज से 2008 में 1660 लाख हैक्टर थी, जो कि 2009 में ट्रेट या वर्चुअल हैक्टर में 1800 लाख हैक्टर हो गई। पिछले कुछ सालों में बायोटैक फसलों को अगेती अपनाने वाले देशों में वृद्धि मुख्य रूप से पुंजित विशेषकों (एकल विशेषक वाली एक किस्म या संकर के विपरीत) से हुई और प्रमुख बायोटैक देशों में अपनाने की

सारणी : 1. 2009 में बायोटैक फसलों का वैश्विक क्षेत्र : देशों में मिलियन हैक्टर में

श्रेणी	देश	क्षेत्र (मिलियन हैक्टर में)	बायोटैक फसलें
1*	अमरीका	64.0	सोयाबीन, मक्का, कपास, कनोला, स्क्वैश, पपीता, तिपतिया, चीनी चुकंदर
2*	ब्राजील	21.4	सोयाबीन, मक्का, कपास
3*	अर्जेंटिना	21.3	सोयाबीन, मक्का, कपास
4*	भारत	8.4	कपास
5*	कनाडा	8.2	कनोला, सोयाबीन, मक्का, कपास
6*	चीन	3.7	टमाटर, पोपलर, मक्का, कपास, पपीता, शिमला मिर्च
7*	पैराग्वे	2.2	सोयाबीन
8*	दक्षिण अफ्रीका	2.1	सोयाबीन, मक्का, कपास
9*	उरुग्वे	0.8	सोयाबीन, मक्का
10*	बोलीविया	0.8	सोयाबीन
11*	फिलीपींस	0.5	मक्का
12*	आस्ट्रेलिया	0.2	कपास, कनोला
13*	बर्किना फासो	0.1	कपास
14*	स्पेन	0.1	मक्का
15*	मैक्सिको	0.1	कपास, सोयाबीन
16.	चिली	< 0.1	सोयाबीन, मक्का, कनोला
17.	कोलंबिया	< 0.1	कपास
18.	होंडुरास	< 0.1	मक्का
19.	चैक रिपब्लिक	< 0.1	मक्का
20.	पुर्तगाल	< 0.1	मक्का
21.	रूमानिया	< 0.1	मक्का
22.	पोलैंड	< 0.1	मक्का
23.	कोस्टारिका	< 0.1	कपास, सोयाबीन
24.	ईजिप्ट	< 0.1	मक्का
25.	स्लोवाकिया	< 0.1	मक्का

*50,000 हैक्टर या अधिक क्षेत्र में (बायोटैक फसलें बोने वाले 15 महादेश)

स्रोत : डा. क्लाइव जेम्स, 2009

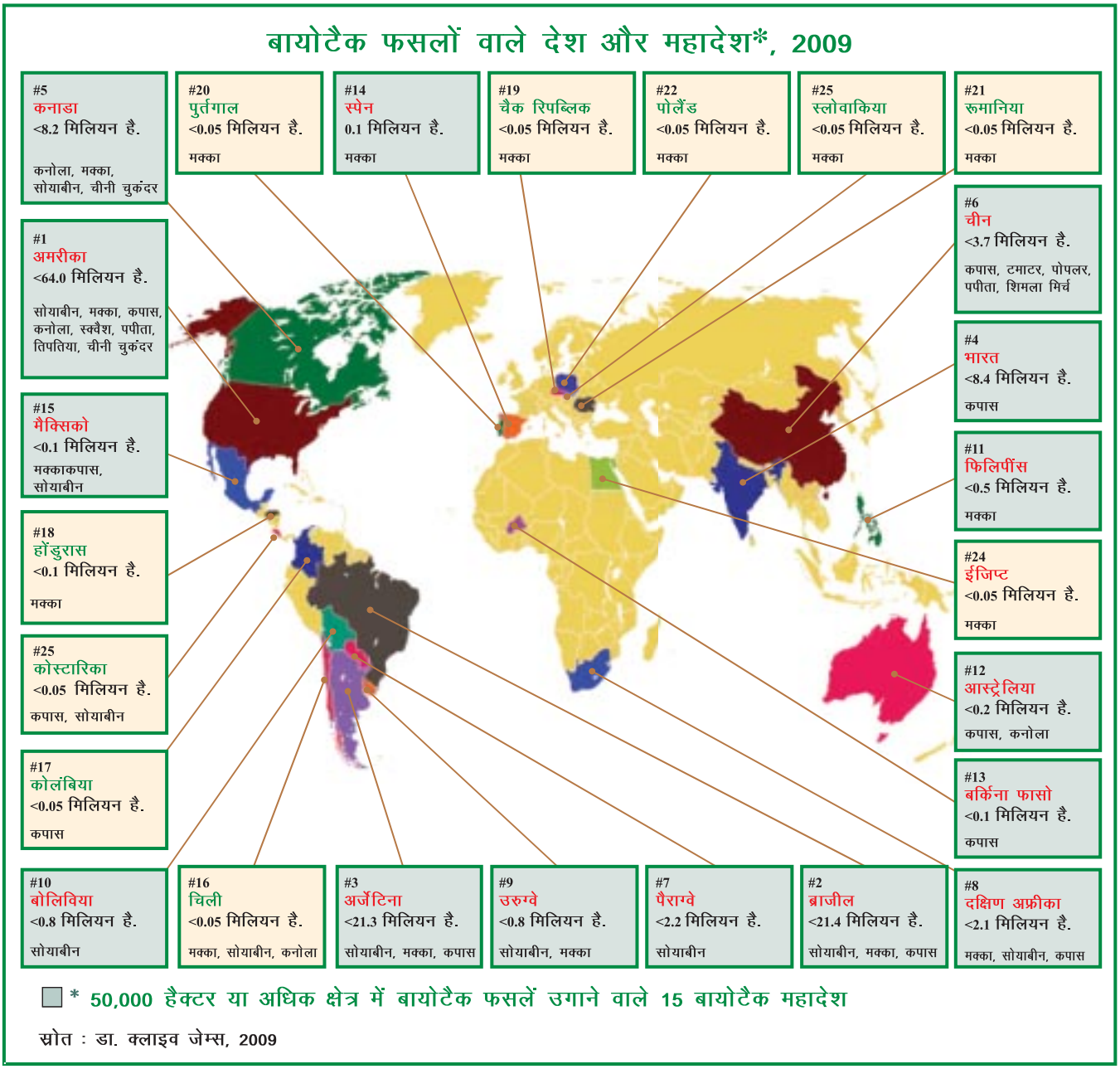

चित्र 1. बायोटैक फसल वाले देश और महादेशों की 2009 की स्थिति का वैश्विक मानचित्र

दर हैक्टर में मापने पर मक्का और कपास में अधिकतम स्तर पर पहुंच गई। उदाहरण के लिए सन् 2000 में अमरीका में मक्का की राष्ट्रीय फसल के 352 लाख हैक्टर में से शानदार 85 प्रतिशत फसल बायोटैक थी। इसमें से 75 प्रतिशत संकर मक्का थी जिसमें या तो दुहरे या तिहरे पुंजित विशेषक थे। यानी केवल 25 प्रतिशत ऐसी संकर मक्का थी, जिसमें केवल एकल विशेषक था। इसी प्रकार अमरीका, आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका में बायोटैक कपास लगभग 90 प्रतिशत या अधिक था, जिसमें से दुहरे पुंजित विशेषक वाला अमरीका के कुल कपास का 75 प्रतिशत, आस्ट्रेलिया में 88 प्रतिशत और दक्षिण अफ्रीका में 75 प्रतिशत था। अतः यह स्पष्ट है कि पुंजित विशेषक (स्टैक्ड ट्रेट्स) बायोटैक फसलों के महत्वपूर्ण अंग बन चुके हैं। अतः यह विवेकपूर्ण होगा कि बायोटैक फसलों की वृद्धि–दर हैक्टरों के साथ ही 'ट्रेट या वर्चुअल हैक्टर' में भी नापी जाए। इस तरह 1996 में 17 लाख हैक्टर से शुरू होकर 2009 में 1340 हैक्टर में फैली बायोटैक फसलों की यह वृद्धि–दर बड़ी शानदार है और इसने 1996 से 2009 के बीच लगभग 80 प्रतिशत की बढ़त दर्ज की।

''व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009''

11 देशों में पुंजित विशेषक वाली बायोटैक फसलें बोई गईं–11 देशों में से 8 विकासशील देश हैं

पुंजित उत्पाद बायोटैक फसलों के महत्वपूर्ण अंग बन चुके हैं और भावी रुख भी इनकी तरफ ही है, क्योंकि ये किसान की अनेक जरूरतों को पूरा करते हैं। अब इनको 11 देशों में अपनाया गया है। इनके क्षेत्र को अधिक से कम क्षेत्र के क्रम में रखें तो ये देश इस प्रकार हैं : अमरीका, अर्जेंटिना, कनाडा, फिलिपींस, दक्षिण अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, मैक्सिको, चिली, कोलंबिया, होंडुरास और कोस्टारिका। यहां यह ध्यान दें कि इन 11 देशों में से 8 विकासशील देश हैं। भविष्य में और अधिक देश पुंजित विशेषकों वाली बायोटैक फसलें अपनाएंगे। सन् 2008 में जहां 269 लाख हैक्टर मे पुंजित बायोटैक फसलें अपनाई गई थीं, वहीं 2009 में 287 लाख हैक्टर में पुंजित फसलें बोई गईं। 2009 में बायोटैक फसलों के 640 लाख हैक्टर क्षेत्र में से 41 प्रतिशत में पुंजित बायोटैक फसलें बोकर अमरीका इस मामले में प्रथम स्थान पर रहा। फिलिपींस में मक्का में दो विशेषक डाले गए, एक तो कीटों के प्रति रोधिता का और दूसरा खरपतवारनाशियों के प्रति रोधिता का। और इस तरह वहां पुंजित बायोटैक मक्का का क्षेत्र 2008 के 57 प्रतिशत से बढ़कर 2009 में 69 प्रतिशत हो गया। सन् 2010 में अमरीका में नई बायोटैक मक्का स्मार्टस्टैक्स™ जारी की जाएगी, जिसमें 8 भिन्न–भिन्न जीन यानी वंशाणु तीन विशेषकों को व्यक्त करने वाले डाले गए हैं। इनमें से दो विशेषक कीटरोधिता के हैं (एक जमीन के ऊपर वाले कीटों के लिए और दूसरा मिट्टी के अंदर रहने वाले हानिकर कीटों के लिए) और तीसरा विशेषक खरपतवार–रोधिता का है। भविष्य में एक बायोटैक फसल में अधिकाधिक विशेषक वाले वंशाणु डालने का प्रचलन जोर पकड़ेगा, जैसे कि कीट–रोधिता, खरपतवार–रोधिता, सूखा–सहयता, अधिक गुणशीलता जैसे कि सोयाबीन में ओमेगा–3 तेल की अधिक मात्रा या गोल्डन राइस में प्रो–विटामिन–ए की बढ़ी हुई मात्रा।

बायोटैक फसलें उगाने वाले किसानों की संख्या 2008 में 7 लाख की बढ़त से 2009 में 140 लाख हो गई और इनमें से 90 प्रतिशत यानी 130 लाख विकाशसील देशों के छोटे, साधनहीन किसान थे

सन् 2009 में बायोटैक फसलों से लाभान्वित होने वाले किसान विश्व स्तर पर 25 देशों में 140 लाख की संख्या पर पहुंच गए और इनमें सन् 2008 की तुलना में 7 लाख की बढ़त दर्ज की गई। विश्व में सन् 2009 में कुल 140 लाख लाभार्थी बायोटैक किसान थे, जबकि सन् 2008 में इनकी संख्या 133 लाख थी। इनमें से 90 प्रतिशत यानी 130 लाख छोटी जोत वाले साधनहीन किसान थे, जबकि सन् 2008 में इनकी संख्या 123 लाख थी। ये सब विकासशील देशों के थे। बाकी बचे 10 लाख किसान, बड़े किसान थे जो कि अमरीका और कनाडा जैसे औद्योगिक देशों के भी थे और अर्जेंटिना और ब्राजील जैसे विकासशील देशों के भी। 130 लाख छोटी जोत वाले साधनहीन किसानों में से अधिकतर बीटी कपास उगाने वाले किसान थे। इनमें से 70 लाख चीन के और 56 लाख भारत के बीटी कपास वाले किसान थे। बाकी 250,000 किसान फिलिपींस (बायोटैक मक्का), दक्षिण अफ्रीका (बायोटैक कपास, मक्का और सोयाबीन उगाने वाले, जिनमें से अधिकतर गुजर–बसर कर रही कृषक–महिलाएं थीं), और अन्य 12 विकासशील देश थे जिन्होंने सन् 2009 में बायोटैक फसलें उगाईं। **सन् 2009 में सबसे अधिक लाभान्वित होने वाले किसान भारत के थे, 6 लाख छोटी जोत वाले जहां–जहां अधिक किसानों ने सन् 2009 में बीटी कपास अपनाई, जो कि कुल कपास–उत्पादकों में से 87 प्रतिशत थे और किसानों की इस संख्या में 2008 के मुकाबले 80 प्रतिशत की बढ़त दर्ज की गई। छोटी जोत वाले इन साधनहीन किसानों की बायोटैक फसल (बीटी कपास) उगाने से जो आमदनी बढ़ी, वह गरीबी हटाने की दिशा में बायोटैक फसलों के विनम्र योगदान का एक उदाहरण है। सन् 2006 से 2015 के बायोटैक फसलों के दशक में बायोटैक फसलों में इसकी महती संभावना है कि वे 2015 तक विश्व में गरीबों की संख्या घटाकर 50 प्रतिशत कर देने के संयुक्त राष्ट्र के सहस्राब्दी विकास लक्ष्य को पूरा करने की दिशा में विशेष योग दें। चीन में किए गए प्रारंभिक अनुसंधान से पता चला है कि वहां बीटी कपास की खेती से छोटी जोत वाले 100 लाख साधनहीन किसानों को इस बायोटैक फसल का द्वितीयक लाभ मिल सकता है।**

सन् 2009 में 25 देशों ने बायोटैक फसलें उगाईं–इनमें से 10 मध्य अमरीका और दक्षिण अमरीका में थे

सन् 2009 में बायोटैक फसलें उगाने वाले देशों की कुल संख्या 25 ही थी, जो कि 2008 में भी थी, लेकिन सन् 2008 के आखिर में इनमें से जर्मनी ने बायोटैक मक्का उगाना बंद कर दिया और उसकी जगह कोस्टारिका ने पहली बार बायोटैक फसल अपनाई। इसलिए संख्या 25 ही बनी रही। चिली की तरह कोस्टारिका में भी बीजों का निर्यात करने के लिए ही बायोटैक फसलों की खेती की जा रही है। इनको मिलाकर लैटिन अमरीका में बायोटैक फसलें उगाने वाले देशों की संख्या बढ़कर

ऐतिहासिक '10' पर पहुंच गई है। बायोटैक फसलों वाले देशों की गिनती बायोटैक फसलों के व्यापारीकरण के प्रथम वर्ष सन् 1996 के देशों से शुरू करके हर साल लगातार बढ़ती जा रही है। सन् 2003 में ये देश 18 हो गए थे और 2009 में इनकी संख्या 25 हो गई। जापान ने 2009 में बायोटैक नीला गुलाब उगाना शुरू किया। ये गुलाब आंशिक तौर पर ग्रीन हाउसों में उगाए जाते हैं और कोलंबिया तथा आस्ट्रेलिया के बायोटैक कार्नेशनों की तरह इन्हें भी 'आईएसएएए' के बायोटैक खाद्य, पशुआहार और रेशों वाली फसलों के आकलन में शामिल नहीं किया जाता है, जैसा कि एफ ए ओ की सूची में परिभाषित किया गया है।

हालांकि सन् 2008 में बायोटैक फसलों का प्रतिशत काफी ऊंचा था, फिर भी सन् 2009 में बायोटैक फसलों का क्षेत्र बढ़ा

सन् 2009 में बायोटैक फसलों के क्षेत्र में 70 प्रतिशत की शानदार बढ़त दर्ज की गई, यानी 90 लाख हैक्टर की, हालांकि 2009 में बायोटैक फसलों में बढ़त की गुंजाइश बहुत कम थी, क्योंकि :

- अधिकतर प्रमुख बायोटैक देशों में बायोटैक फसलें अपनाने की दर पहले ही 80 प्रतिशत या अधिक की ऊंची दर पर पहुंच गई थी;
- व्यापक सूखे और प्रतिकूल जलवायु–दशाओं के कारण कृषि–क्षेत्र में अनिश्चितता व्याप्त थी;
- पिछली घोर मंदी के बाद की सबसे बड़ी आर्थिक मंदी ने दुनिया को लपेट रखा था और इसकी वजह से फसलों की बुआई में कमी आई;
- जहां 2008 के मध्य में विभिन्न जिंसों के दाम बढ़े थे, वहीं बाद में और 2009 में जिंसों की कीमतें औंधे मुंह आ पड़ीं और किसानों को पहले सालों की तरह अधिक बुआई करने का कोई प्रोत्साहन नहीं मिला।

हालांकि सन् 2008 में बायोटैक फसलें अपनाने की दर काफी ऊंची चढ़ गई थी, फिर भी सन् 2009 में बायोटैक फसलों को अपनाने का प्रतिशत बढ़त दिखाता रहा। उदाहरण के लिए बीटी कपास का क्षेत्र 80 प्रतिशत से बढ़कर 87 प्रतिशत हो गया; अमरीका में बायोटैक मक्का का क्षेत्र 80 प्रतिशत से बढ़कर 85 प्रतिशत हो गया; और कनाडा में बायोटैक कनोला 86 प्रतिशत से बढ़कर 93 प्रतिशत पर पहुंच गया (देखें चित्र–2 और 3)। चीन में वैश्विक रुख के अनुसार कपास की कुल बुआई कम हुई, लेकिन बायोटैक कपास बोने के क्षेत्र में कोई कमी नहीं आई और वह 2009 में भी 2008 के 65 प्रतिशत की दर पर ही बना रहा। लेकिन अमरीका में कपास की कुल बुआई में 4 प्रतिशत की कमी जरूर आई लेकिन बायोटैक फसलें अपनाने का क्षेत्र सन् 2008 के 86 प्रतिशत से बढ़कर 2009 में 88 प्रतिशत बढ़ गया। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि सन् 1976 में जब पहली बार व्यापारिक स्तर पर बायोटैक फसलें बोई गई थीं, तब से साल–दर साल इनका क्षेत्र लगातार बढ़ता रहा है। इस तरह पहले बारह सालों में लगातार दुहरे अंकों से बढ़त जारी रही, 2008 में मंदी के बावजूद 9.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई और 2009 में 7 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई।

ब्राजील ने बायोटैक फसलें उगाने में विश्व के दूसरे स्थान से अर्जेंटिना को हटाकर, उसकी जगह ले ली

सन् 2009 में पूर्वानुमान के अनुसार ब्राजील में बायोटैक फसलें 214 लाख हैक्टर में थीं और इस तरह 56 लाख हैक्टर बढ़त दर्ज की गई। यह वृद्धि विश्व के किसी भी दूसरे देश से अधिक थी और 2008 के मुकाबले 35 प्रतिशत अधिक थी। ब्राजील अब विश्व की कुल बायोटैक फसलों के 16 प्रतिशत क्षेत्र में बायोटैक फसलें उगाता है। सन् 2009 में ब्राजील में 214 लाख हैक्टर में बायोटैक फसलें बोयी गईं थीं, जिसमें से 162 लाख हैक्टर में 'RR$^{(R)}$ सोयाबीन' बोई गई। यह फसल लगातार सातवें वर्ष बोई गई, जबकि 2008 में यह 142 लाख हैक्टर में बोई गई थी। 2008 में ब्राजील में बायोटैक फसलें अपनाने की दर 65 प्रतिशत थी, जो 2009 में बढ़कर 71 प्रतिशत के रिकॉर्ड स्तर पर पहुंच गई। इससे 150,000 किसान लाभान्वित हुए। इसके अतिरिक्त ब्राजील ने सन् 2009 में गर्मी और जाड़े (साफ्रिन्हा), दोनों मौसम की फसल में बीटी मक्का दूसरी बार बोई। सन् 2008 के मुकाबले बीटी मक्का का क्षेत्र लगभग 400 प्रतिशत बढ़कर 37 लाख हैक्टर हो गया और इस तरह सन् 2009 में ब्राजील ने बायोटैक फसल अपनाने में दुनिया के किसी भी दूसरे देश से अधिक बढ़त दर्शायी। वहां गरमी की बायोटैक मक्का में 30 प्रतिशत और जाड़ों की बायोटैक मक्का में 53 प्रतिशत बढ़त दर्ज की गई। 2009 में ब्राजील ने बायोटैक कपास 145,000 हैक्टर में बोई। यह फसल वहां चौथी बार बोई गई थी। इसमें से 116,000 हैक्टर बीटी कपास थी और 29000 हैक्टर एचटी कपास। इस प्रकार सन् 2009 में ब्राजील में सोयाबीन, मक्का और कपास की बायोटैक फसलों को मिलाकर साल–दर–साल

चित्र 2. 1996 से 2009 के दौरान अमरीका में बायोटैक फसलें अपनाने का प्रतिशत

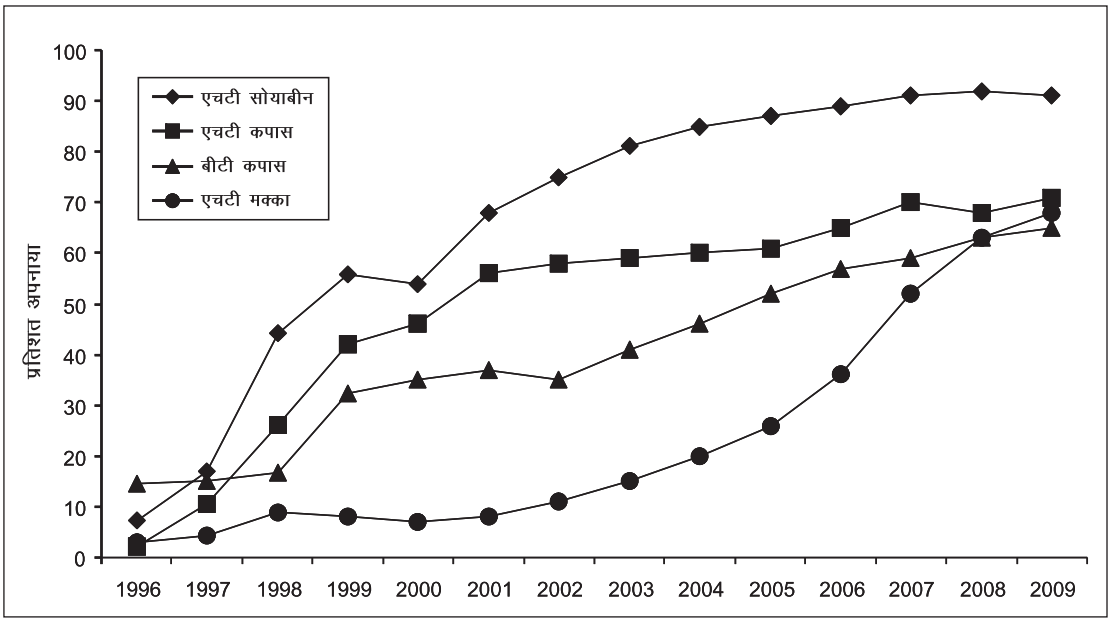

स्रोत : यूएसडीए की राष्ट्रीय कृषि सांख्यिकी सेवा (एनएएएस), 2009ए।

चित्र 3. ब्राजील, कनाडा, चीन और भारत में बायोटैक फसलें अपनाने का प्रतिशत

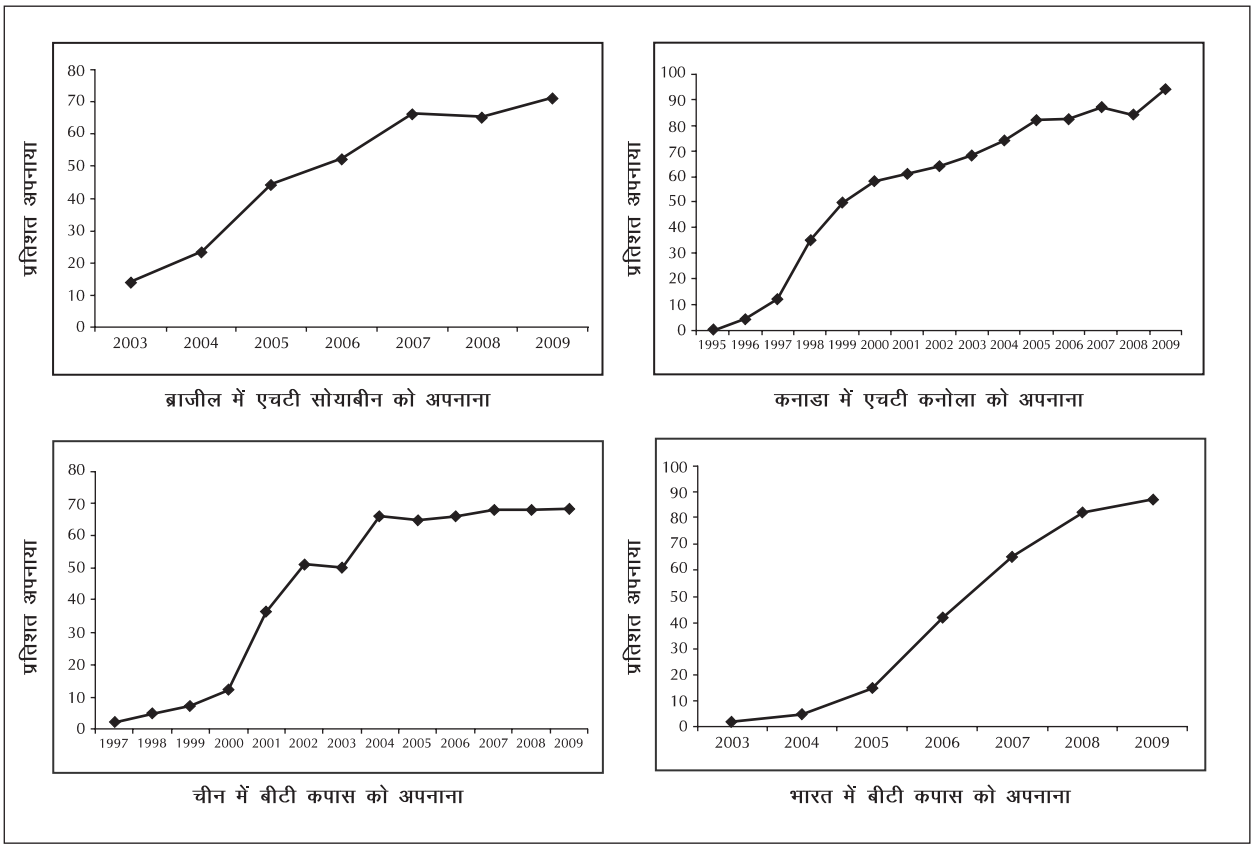

स्रोत : डा. क्लाइव जेम्स द्वारा संकलित, 2009

की राष्ट्रीय वृद्धि–दर 2008 के मुकाबले 35 प्रतिशत पर पहुंच गई यानी 56 लाख हैक्टर में बायोटैक फसलें अधिक बोई गईं। यह वृद्धि–दर दुनिया के किसी भी देश से अधिक थी, जिसने पहली बार ब्राजील को बायोटैक फसलों को अपनाने में क्षेत्र के लिहाज से दुनिया में दूसरे नंबर पर पहुंचा दिया। इस तरह ब्राजील को 2003 से 2008 के दौरान बायोटैक फसलों से 2.8 अरब अमरीकी डालर की कमाई हुई और अकेले 2008 में यह लाभ 70 करोड़ डालर था।

भारत को बीटी कपास से 2002 से 2009 तक के 8 सालों में शानदार फायदा पहुंचा और अब भारत की पहली बायोटैक खाद्य फसल बीटी बैंगन को व्यापारीकरण के लिए अनुमोदित किया गया

भारत में पिछले आठ वर्षों से लगातार बीटी कपास उगाने से शानदार फायदा पहुंचा है और इसका क्षेत्र अपनाने की दर और इसे उगाने वाले किसान सबकी रिकॉर्ड बढ़त हुई है। सन् 2009 में भारत के 56 लाख छोटी जोत वाले और हाशिए के साधनहीन किसानों ने लगभग 84 लाख हैक्टर में बीटी कपास बोया जो कि भारत के कुल राष्ट्रीय कपास क्षेत्र, 96 लाख हैक्टर का, 87 प्रतिशत के करीब बैठता है। यह दर सन् 2008 में ही काफी ऊंची थी, जब लगभग 50 लाख किसानों ने 76 लाख हैक्टर में बीटी कपास बोया। यह कुल 94 लाख हैक्टर में बोए गए कपास के क्षेत्र का लगभग 80 प्रतिशत क्षेत्र था। सन् 2009 में तो इस क्षेत्र में सभी बढ़त शानदार रहीं। जब 2002 में भारत में पहली बार बीटी कपास की खेती शुरू की गई, तो 50,000 हैक्टर में बोई गई थी, जो सन् 2009 में बढ़ते–बढ़ते 84 लाख हैक्टर में फैल गई। यानी आठ सालों में अप्रत्याशित 168 गुनी बढ़त हुई। पहली बार अनेक जीन यानी वंशाणु वाली बीटी कपास ने एकल वंशाणु वाली कपास के 43 प्रतिशत क्षेत्र से ऊपर जाकर 57 प्रतिशत क्षेत्र में अपना जौहर दिखाया। सन् 2009 में एक और नई बात हुई कि पहली बार सरकारी क्षेत्र में विकसित बीकानेरी नर्मा में बीटी का वंशाणु डालकर बीटी कपास वाली बीकानेरी नर्मा जारी की गई। साथ ही एक बीटी वाली संकर कपास 'एनएचएच–44' भी खेती के लिए जारी की गई। इस तरह भारत में बायोटैक फसलों में निजी और सरकारी क्षेत्र दोनों का योगदान शुरू हुआ। 2009 में ही बीटी कपास की एक नई किस्म भी जारी की गई, जिसे भारत की ही एक निजी कंपनी ने उसमें सिंथेटिक *cry1C* जीन, डालकर विकसित किया था। इस तरह बीटी कपास की भारत में कुल छह किस्में जारी की गईं। पिछले आठ सालों में भारत में बीटी कपास उगाए जाने से भारत विश्व में कपास के उत्पादन में सबसे बड़ा दूसरा कपास–उत्पादक बन गया और कपास–निर्यातक के रूप में प्रथम स्थान पर पहुंच गया। सच तो यह है कि बीटी कपास ने भारत में कपास–उत्पादन में क्रांति का आवाह्न किया। **सन् 2002 से 2008 की सात साल की छोटी–सी अवधि में ही भारत के कपास–उत्पादकों को 51 अरब अमरीकी डालर का लाभ पहुंचा, कीटनाशियों की जरूरत घटकर आधी रह गई, उपज दूनी हो गई और भारत को कपास–आयातक के स्तर से ऊपर उठाकर कपास–निर्यातक बना दिया।** अकेले सन् 2008 में भारत को बीटी कपास की खेती से 18 अरब डालर की शानदार आमदनी हुई। अक्टूबर 2009 में भारत की 'जीईएसी' यानी जेनेटिक इंजीनियरिंग एप्रूवल कमेटी ने एक ऐतिहासिक निर्णय लेकर बीटी बैंगन को व्यापारिक खेती के लिए जारी करने की स्वीकृति प्रदान की, जो भारत सरकार द्वारा अंतिम स्वीकृति दिए जाने के लिए लंबित है। बैंगन भारत में सब्जियों का राजा माना जाता है, लेकिन उसकी खेती में कीटनाशी दवाओं का भारी छिड़काव किया जाता है। बीटी बैंगन भारत में व्यापारीकृत कृषि के लिए जारी की जाने वाली पहली खाद्य फसल होगी और फिर इसमें कीटनाशियों के छिड़काव की जरूरत बेहद कम हो जाएगी और यह भारत की खाद्य में आत्मनिर्भरता में बहुत मदद करेगी। उपभोक्ताओं तक बैंगन की सब्जी उचित दामों में पहुंचेगी और इसकी खेती करने वाले लगभग 14 लाख छोटी जोत वाले साधनहीन किसानों की गरीबी दूर होगी। सन् 2007 में 'आई आई एम ए' ने भारत में एक सर्वेक्षण के बाद यह निष्कर्ष निकाला था, कि भारत के 70 प्रतिशत मध्यवर्गीय नागरिक बायोटैक खाद्य पदार्थ स्वीकार करते हैं और उच्च गुणवत्ता वाले बायोटैक खाद्यों के लिए यदि 20 प्रतिशत अधिक दाम चुकाना पड़े तो उसमें उन्हें कोई एतराज नहीं है। इन बायोटेक खाद्यों में 'गोल्डन राइस' भी शामिल है, जिसमें 'प्रो–विटामिन ए' की मात्रा काफी बढ़ी हुई है और भारत में इसे 2012 में उपलब्ध कराए जाने की उम्मीद है। भारत में बीटी–धान सहित अनेक बायोटैक फसलों पर 'फील्ड ट्राइल' चल रहे हैं।

अफ्रीका में दक्षिण अफ्रीका, बर्किना फासो और ईजिप्ट में प्रगति जारी

अफ्रीका में लगभग एक अरब लोग रहते हैं, यानी विश्व की जनसंख्या के 15 प्रतिशत लोग। यह विश्व का एकमात्र ऐसा भू–भाग है जहां प्रति व्यक्ति खाद्य–उत्पादन लगातार घट रहा है और तीन में एक अफ्रीकी भूख तथा कुपोषण से पीड़ित है। सन् 2008 तक इस महाद्वीप में केवल दक्षिण अफ्रीका ही एकमात्र देश था, जो बायोटैक फसलें उगाकर लाभ उठा रहा था। **सन् 2009 में एक अनुमान के अनुसार दक्षिण अफ्रीका में बायोटैक फसलों का क्षेत्र लगभग 21 लाख हैक्टर था, जो सन् 2008 के 18 लाख हैक्टर से सार्थक वृद्धि दर्शाता है। साल–दर–साल वृद्धि–दर को आंकें तो यह 17 प्रतिशत बैठती है।** सन् 2009 में जो बढ़त हुई वह मुख्य रूप से बायोटैक मक्का के क्षेत्र में हुई, जिसके साथ

बायोटैक सोयाबीन को अपनाने का क्षेत्र भी 80 प्रतिशत की दर पर जा पहुंचा और बायोटैक कपास को अपनाने की दर 98 प्रतिशत हो गई। दो अन्य अफ्रीकी देश सन् 2008 में बायोटैक देशों के रूप में दक्षिण अफ्रीका के साथ आ गए और वे हैं **बर्किना फासो और ईजिप्ट**। सन् 2008 में पहली बार बर्किना फासो के लगभग 4,500 किसानों ने बीटी कपास का 1600 टन बीज 6,800 खेतों में पैदा किया। 2008 में ही 8,500 हैक्टर में बीटी कपास बोया गया। **बर्किना फासो में सन् 2009 में लगभग 1,15,000 हैक्टर में बीटी कपास की व्यापारिक खेती की गई। 2008 के 8,500 हैक्टर की तुलना में यह बढ़त साल–दर–साल के हिसाब से अप्रत्याशित 14 गुनी बढ़त थी और प्रतिशत वृद्धि 1,353 प्रतिशत बैठती है, यानी 106,500 हैक्टर जो विश्व में एक साल में बायोटैक फसलों की किसी भी देश की बढ़त से ऊंची वृद्धि–दर है।** इस प्रकार बर्किना फासो में बायोटैक फसल को अपनाने की दर 2008 में 4,75,000 हैक्टर के 2 प्रतिशत से बढ़कर 2009 में 400,000 हैक्टर की ठोस 29 प्रतिशत दर तक पहुंच गई। बर्किना फासो में 2009 में 380,000 हैक्टर में बोने लायक बीटी कपास का पर्याप्त बीज पैदा किया गया। बर्किना फासो में 2010 में 475,000 हैक्टर कपास बोया जाना है और वहां के कुल कपास का 70 प्रतिशत क्षेत्र बीटी कपास का ही है। यह हिसाब लगाया गया है कि बर्किना फासो बीटी कपास का बीज पैदा करके हर साल अमरीकी 100 मिलियन डालर कमा सकेगा। यह अनुमान उपज में 30 प्रतिशत की बढ़त के आधार पर है और साथ ही इसमें कीटनाशी दवाओं के छिड़काव में आई आधी कमी भी जोड़ी गयी है। परंपरागत कपास के खेतों में यहां आठ बार कीटनाशी दवा छिड़की जाती थी, जो बीटी कपास में घटकर केवल 2 से 4 बार छिड़काव करने की रह गई है।

सन् 2009 में ईजिप्ट ने बीटी मक्का को दूसरे साल 1000 हैक्टर में उगाया। यह 2008 में बोई गई बीटी मक्का के क्षेत्र में 15 प्रतिशत से अधिक की बढ़त दर्शाता है। सन् 2008 में ईजिप्ट पहला अरब देश था, जिसने किसी बायोटैक फसल की व्यापारिक खेती की। यह थी संकर पीली बीटी मक्का, 'अजीब वाई जी'। वहां सन् 2009 में 5000 हैक्टर में बीटी मक्का बोने की योजना थी, जो लागू नहीं हो पाई, क्योंकि 'अजीब वाई जी' नहीं मिली। यह बीज आ जाता तो 5300 हैक्टर में बोने के लिए काफी होता। इस तरह स्थानीय तौर पर पैदा किए गए 'अजीब वाई जी' के केवल 28 टन बीज को 2009 में लगभग 1000 हैक्टर में बोकर ही बीज–विकासकर्ताओं को संतोष करना पड़ा।

विकासशील देशों ने वैश्विक बायोटैक फसलों में अपनी हिस्सेदारी 50 प्रतिशत तक बढ़ाई और आशा है कि वे भविष्य में अपने–अपने यहां बायोटैक क्षेत्र लगातार बढ़ाते जाएंगे।

सन् 2009 में आईएसएएए ने जैसा आकलन दिया था, उसी के अनुसार विकासशील देशों ने 615 लाख हैक्टर में बायोटैक फसलें बोकर वैश्विक बायोटैक फसलों में अपने हिस्सेदारी लगातार बढ़ाई। विश्व में कुल 1340 लाख हैक्टर में बायोटैक फसलें बोई गईं और उसकी लगभग आधी (46 प्रतिशत) विकासशील देशों में बोई गईं। सन् 2008 में विकासशील देशों की सामूहिक जनसंख्या 2.8 अरब है और वे दक्षिणी गोलार्द्ध के तीन महाद्वीपों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये हैं : ब्राजील, अर्जेंटिना, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका। ये पांचों देश विश्व के 1340 लाख हैक्टर के बायोटैक क्षेत्र के लगभग 570 लाख हैक्टर में बायोटैक फसलों को अपनाकर अपना वर्चस्व बनाए रहे। ये पांचों महादेश विश्व में बायोटैक फसलों के प्रसार के प्रेरक बनकर अपने–अपने यहां राजनीतिक समर्थन के साथ ही बायोटैक फसलों के लिए वित्तीय समर्थन भी प्राप्त करते रहे।

यहां यह भी ध्यान देने योग्य है कि सन् 2009 में जिन देशों ने बायोटैक फसलों के क्षेत्र में 10 प्रतिशत या अधिक की समानुपाती वृद्धि–दर अर्जित कर दिखाई, वे सातों देश विकासशील देश हैं। घटते हुए प्रतिशत के क्रम में इनके नाम इस प्रकार हैं : बर्किना फासो (1353 प्रतिशत की बढ़ोतरी), ब्राजील (35 प्रतिशत वृद्धि), बोलीविया (33 प्रतिशत), फिलिपींस (25 प्रतिशत), दक्षिण अफ्रीका (17 प्रतिशत), उरुग्वे (14 प्रतिशत) और भारत (11 प्रतिशत)। पहले की तरह 2009 में भी विकासशील देशों में बायोटैक फसलों के क्षेत्र की प्रतिशत वृद्धि सार्थक रूप से मजबूत बनी रही, जो कि 13 प्रतिशत यानी 70 लाख हैक्टर थी, जबकि औद्योगिक देशों में यह 3 प्रतिशत यानी 20 लाख हैक्टर थी। इस तरह 2008 और 2009 में साल–दर–साल कुल हैक्टर के रूप में या प्रतिशत के रूप में आकलित करने पर औद्योगिक देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में बायोटैक फसलों की वृद्धि सार्थक रूप से ऊंची रही। जैसे–जैसे समय बीतेगा, विकासशील देश निकट, मध्य और दीर्घकाल में औद्योगिक देशों से अधिक बायोटैक फसलें अपनाना जारी रखेंगे, क्योंकि रुख यह बताता है कि दक्षिणी विश्व के अधिकाधिक देश बायोटैक फसलों की ओर मुड़ेंगे, जैसे कि धान में, जो कि 90 प्रतिशत विकासशील देशों में ही उगाया जाता है।

पांच मुख्य विकासशील देश सामूहिक रूप से 569 लाख हैक्टर में बायोटैक फसलें उगा रहे हैं, जो कि बायोटैक फसलों के वैश्विक क्षेत्र 1340 हैक्टर के 43 प्रतिशत के बराबर है। ये देश है : ब्राजील (214 लाख हैक्टर), अर्जेंटिना (213 लाख), भारत (84 लाख), चीन (37 लाख) और दक्षिण अफ्रीका (21 लाख)। ये पांचों देश बायोटैक फसलों के लिए प्रतिबद्ध हैं और यह

उल्लेखनीय है कि दक्षिणी गोलार्द्ध के तीनों महाद्वीपों का प्रतिनिधित्व करते हैं। सामूहिक रूप से ये देश 1.3 अरब लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो कि पूरी तरह कृषि पर निर्भर हैं। इनमें लाखों छोटी जोत वाले साधनहीन किसान और ग्रामीण भूमिहीन शामिल हैं और ये ही दुनिया के सबसे गरीब लोगों में सबसे ज्यादा संख्या में हैं। इन पांचों देशों का विश्व के बायोटैक–परिदृश्य पर दूरगामी प्रभाव पड़ेगा क्योंकि इनके इस रुख के अनुसार भविष्य में बायोटैक फसलों का विश्वव्यापी प्रसार और भी जोर पकड़ेगा। हमने संक्षेप–41 में इन पांचों देशों की विस्तृत समीक्षा की है, जिसमें वर्तमान में विशिष्ट बायोटैक फसलों को अपनाने का व्यापक विश्लेषण भी किया गया है और उनके प्रभाव तथा भावी संभावनाओं को रेखांकित किया गया है। इन देशों में बायोटैक फसलों पर अनुसंधान और विकास कार्य अब ठोस ढंग से चल रहे हैं और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के मानकों पर भी वह खरा उतरता है। बायोटैक फसलों के व्यापारीकरण के पहले 13 सालों (1996 से 2008) के दौरान किसानों की आमदनी बायोटैक फसलों से 5190 करोड़ अमरीकी डालर कूती गई है। यहां यह ध्यान देने की बात है कि इस आमदनी का आधा यानी 2610 करोड़ डालर विकासशील देशों को ही मिला और बाकी आधा 2580 करोड़ डालर औद्योगिक देशों को (ब्रुक्स और बारफुट–2010, शीघ्र प्रकाश्य)।

सन् 2009 में यूरोपी संघ में बीटी मक्का का स्तर–छह ई यू देशों ने 2009 में 94,750 हैक्टर में बीटी मक्का बोई

सन् 2009 में यूरोपी संघ के छह देशों ने बीटी मक्का उगाई। जर्मनी ने 2008 के अंत में अपने यहां बीटी मक्का उगाना बंद कर दिया। सबसे अधिक बीटी मक्का का क्षेत्र यूरोपी संघ के देशों में स्पेन में रहा, जहां ई यू की कुल बीटी मक्का का 80 प्रतिशत क्षेत्र था। स्पेन की अपनाने की दर 2009 में यूरोपी संघ के छह देशों का कुल सामूहिक बीटी–मक्का क्षेत्र 94,750 हैक्टर था, जबकि जर्मनी के 2008 के बीटी मक्का के 3,773 हैक्टर क्षेत्र को शामिल करके 2008 में यूरोपी संघ का बीटी मक्का–क्षेत्र 107,719 हैक्टर बैठता है। जबकि जर्मनी का बीटी मक्का क्षेत्र निकाल दें तो 104,456 हैक्टर बैठता है। इस तरह 2008 की तुलना में 2009 में जर्मनी का 2008 का क्षेत्र शामिल करके 12,969 हैक्टर बीटी मक्का–क्षेत्र घटा जो 12 प्रतिशत घटाव दर्शाता है। जर्मनी का क्षेत्र निकाल दें तो यह घटाव 9 प्रतिशत यानी 9,796 हैक्टर बैठता है। यूरोपी संघ की इस घटोतरी के पीछे अनेक स्पष्ट कारण हैं, जैसे कि आर्थिक मंदी, कुल संकर मक्का की भी कम बुआई और किसानों को बीटी के विरुद्ध प्रचार के दबाव में कोई प्रोत्साहन न देना।

सन् 2009 में यूरोप संघ के 27 देशों में से छह हने अधिकृत रूप से व्यापारिक स्तर पर बीटी मक्का की बुआई की। इनको यदि क्षेत्र घटने के क्रम से सूचीबद्ध करें तो ये छह देश हैं : स्पेन, चेक रिपब्लिक, पुर्तगाल, रूमानिया, पौलेंड और स्लोवाकिया। 2008 में बीटी मक्का की खेती वाले सभी सात यूरोपीय देशों ने 2007 से अधिक क्षेत्र में बीटी मक्का बोई थी। लेकिन 2008 और 2009 के बीच साल–दर–साल की वृद्धि–दर के हिसाब से क्षेत्र में परिवर्तन हुए। 2009 में जो छह यूरोपी देश बीटी मक्का उगा रहे थे, उनमें से पुर्तगाल में 2008 के मुकाबले अधिक क्षेत्र था, पौलेंड में उतना ही क्षेत्र था, स्पेन में क्षेत्र में 4 प्रतिशत की गिरावट आई और कुल मक्का भी 2008 से कम बोई गई। इस तरह अपनाने की दर 2008 और 2009 में वह 22 प्रतिशत बनी रही। बाकी तीन यूरोपी देश चेक रिपब्लिक, रूमानिया और स्लोवाकिया में 2009 में बीटी मक्का कम बोई गई जो कि कुल क्षेत्र की दृष्टि से 1000 से 7000 हैक्टर में बोई गई थी।

फसलों के अनुसार अपनाने की दर

सन् 2009 में भी खरपातसह सोयाबीन प्रमुख बायोटैक फसल बनी रही और विश्व के 1340 लाख हैक्टर बायोटैक–क्षेत्र का 52 प्रतिशत यानी 692 लाख हैक्टर इसी बायोटैक सोयाबीन के कब्जे में रहा। यह 2008 के मुकाबले 658 लाख हैक्टर अधिक था। इसके बाद आती है बायोटैक मक्का जो 2008 के 373 लाख हैक्टर के मुकाबले 31 प्रतिशत ऊपर होकर 417 लाख हैक्टर में बोई गई। बायोटैक कपास 2008 के 155 लाख हैक्टर से 12 प्रतिशत ऊपर होकर 161 लाख हैक्टर में बोई गई। और बायोटैक कनोला 2008 के 59 लाख हैक्टर से 5 प्रतिशत ऊपर होकर 64 लाख हैक्टर में बोई गई।

विशेषक (ट्रेट) के अनुसार अपनाने की दर

जब 1996 में पहली बार बायोटैक फसलें व्यापारीकृत की गईं, तभी से 2009 तक जो विशेषक सबसे ऊपर अपनाया गया, वह है खरपात–रोधिता। सन् 2009 में खरपतवार–सहयता का विशेषक सोयाबीन, मक्का, कनोला, कपास, चीनी चुकंदर और तिपतिया (अल्फाल्फा) में समाविष्ट किया गया और यह विशेषक 2008 के 790 लाख हैक्टर क्षेत्र से 62 प्रतिशत बढ़कर 836 लाख हैक्टर में अपनाया गया। तीन साल से लगातार दुहरे और तिहरे विशेषकों वाली पुंजित बायोटैक फसलों को उगाने की दर बढ़ती जा रही है और सन् 2009 में विश्व के बायोटैक क्षेत्र

के 21 प्रतिशत क्षेत्र में यानी लगभग 287 लाख हैक्टर में पुंजित बायोटैक फसलों का बोलबाला रहा, जो कि सन् 2008 में 269 लाख हैक्टर उगाई जा रही थीं। यह क्षेत्र कीटरोधिता के विशेषक वाली बायोटैक फसलों के 217 लाख क्षेत्र से अधिक था, जो सन् 2009 में कुल बायोटैक फसलों के 15 प्रतिशत क्षेत्र में उगाई गईं। **कीटरोधी बायोटैक फसलों का क्षेत्र सन् 2008 में 191 लाख हैक्टर था। कीटरोधी बायोटैक फसलों के क्षेत्र में वृद्धि की दर 14 प्रतिशत रही जबकि कई पुंजित विशेषकों वाली फसलें और खरपतवार–सह फसलें दोनों ही एक ही वृद्धि–दर 6 प्रतिशत से बढ़ीं।**

सन् 2009 में RR® चीनी चुकंदर (शुगरबीट) को अपनाने की दर अमरीका और कनाडा में तीसरे साल में ही 95 प्रतिशत पर पहुंच गई और अब तक यह सबसे तेजी से अपनाई जा रही बायोटैक फसल का दर्जा पा चुकी है

सन् 2009 में अमरीका में बोई गई शुगरबीट की फसल के 485,000 हैक्टर क्षेत्र में से 95 प्रतिशत में जैव प्रौद्योगिकी से सुधारी गई किस्में छा गईं। सन् 2007 में ये काफी कम क्षेत्र में उगाई जा रही थीं और सन् 2008 में इनका क्षेत्र 59 प्रतिशत था। कनाडा में शुगरबीट की बायोटैक किस्में सन् 2009 में लगभग 15,000 हैक्टर में उगाई गईं और उनका यह क्षेत्र कनाडा के कुल शुगरबीट क्षेत्र का 96 प्रतिशत था। इस प्रकार शुगरबीट विश्व में सबसे तेजी से अपनाई गई बायोटैक फसल बन गई। सितंबर 2009 में कैलीफोर्निया की एक अदालत ने अमरीकी कृषि विभाग (यूएसडीए) पर यह आरोप लगाया कि उसने शुगरबीट की खेती की इजाजत देने से पहले RR® शुगरबीट की उचित प्रकार से जांच नहीं की और आदेश दिया कि इसके बारे में और गहन परीक्षण किया जाये। जब यह संक्षेप प्रेस में भेजा जा रहा था, तब तक वह अध्ययन पूरा नहीं हुआ था। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि अदालत ने RR® शुगरबीट की जैव–सुरक्षा और उपयोगिता पर कोई सवाल नहीं उठाया। अमरीका और कनाडा में किसानों में RR® शुगरबीट की बायोटैक किस्मों की जिस तेजी से मांग बढ़ी है और उसके बारे में किसान जिस तरह से संतुष्ट होकर उसकी खेती का क्षेत्र बढ़ाते जा रहे हैं, उसका विश्व में 80 प्रतिशत चीनी पैदा करने वाले गन्ने की खेती पर असर पड़ेगा। हालांकि अनेक विकासशील देशों में गन्ने की बायोटैक किस्में विकसित करने पर भी अनुसंधान चल रहा है। बायोटैक गन्ने की खेती पर अक्टूबर 2009 में परीक्षण करने की आस्ट्रेलिया को स्वीकृति मिल चुकी है।

सन् 1996 से 2009 के दौरान कुल मिलाकर बायोटैक फसलों का क्षेत्र लगभग एक अरब हैक्टर की सीमा तक पहुंच गया

जिन आठ देशों ने बायोटैक फसलों को 10 लाख हैक्टर से अधिक क्षेत्र में उगाया उनकी घटते जाने के क्रम से सूची इस प्रकार है : अमरीका (640 लाख हैक्टर), ब्राजील (214 लाख), अर्जेंटिना (213 लाख), भारत (84 लाख), कनाडा (82 लाख), चीन (37 लाख), पैराग्वे (22 लाख) और दक्षिण अफ्रीका (21 लाख) (देखें सारणी–1 तथा चित्र–1)। यह रुख यह दर्शाता है कि बायोटैक फसलों के क्षेत्र को और तेजी से अपनाने में विकासशील देशों की भूमिका लगातार महत्वपूर्ण होती जा रही है। यहां यह भी ध्यान देने योग्य है कि सन् 2008 और 2009 में हलकी–सी तेज प्रगति करके 35 प्रतिशत बायोटैक क्षेत्र के साथ ब्राजील ने विश्व में सबसे बड़े दूसरे नंबर के बायोटैक फसल–उत्पादक की हैसियत से अर्जेंटिना को हटाया और खुद उस जगह पहुंच गया। **बाकी 17 देश जिन्होंने सन् 2009 में बायोटैक फसलें बोयीं वे क्षेत्र घटने के क्रम में इस प्रकार हैं** : उरुग्वे, बोलीविया, फिलिपींस, आस्ट्रेलिया, बर्किना फासो, स्पेन, मैक्सिको, चिली, कोलंबिया, होंडुरास, चेक रिपब्लिक, पुर्तगाल, रूमानिया, पौलैंड, कोस्टारिका, ईजिप्ट और स्लोवाकिया। सन् 2009 में बायोटैक फसलों को अपनाने की दर से भविष्य में इन फसलों की वैश्विक वृद्धि के लिए एक ठोस बुनियाद कायम हो चुकी है। **सन् 1996 से 2009 के बीच बायोटैक फसलों की वृद्धि–दर अप्रत्याशित 79 गुनी हुई है, जो हाल के इतिहास की सबसे तेजी से अपनाई गई फसल–प्रौद्योगिकी का दर्जा पा चुकी है।** किसानों ने जिस तरह इन फसलों में गहरी दिलचस्पी ली है और तेजी से अपनाया है, उससे यह साबित होता है कि बायोटैक फसलें लगातार अच्छा प्रदर्शन कर रही हैं और उनसे विकासशील देशों के किसानों को आर्थिक, पर्यावरणी, स्वास्थ्य संबंधी और सामाजिक लाभ पहुंचे हैं, जो कि छोटी जोत वाले और बड़े दोनों तरह के किसानों को मिले। **इन किसानों ने अपने या पड़ौसी के खेत में साल–दर–साल बायोटैक फसलों को फलते–फूलते और आमदनी बढ़ाते देखा है और 25 देशों में 14 सालों के दौरान 850 लाख किसानों ने अपने आप इन फसलों को पूरे भरोसे से अपनाया है और बायोटैक फसलों का क्षेत्र बराबर बढ़ाया है, इससे बढ़कर बायोटैक फसलों की उपयोगिता का भला और क्या प्रमाण हो सकता है।** कई मामलों में बायोटैक फसलों को अपनाने की दर शत्–प्रतिशत है जो यह स्पष्ट करती है कि किसानों का बायोटैक फसलों पर कितना विश्वास है क्योंकि वे इन फसलों को अधिक आसानी से उगाकर अधिक मुनाफा ले रहे हैं। उनकी लागत कम आ रही है, प्रति हैक्टर उत्पादकता और निवल आय बढ़ रही है। पर्यावरण सुधर रहा है, स्वास्थ्य पर से प्रदूषण का खतरा टल रहा है और तमाम तरह के सामाजिक लाभ मिल रहे हैं। महंगी कीटनाशी दवाएं बहुत कम इस्तेमाल हो रही हैं और कुल मिलाकर खेती टिकाऊ बनती जा रही है। इस तरह औद्योगिक और विकासशील दोनों ही तरह के देशों में बड़े और छोटे दोनों तरह के किसान इन ठोस और सतत लाभों से प्रभावित होकर और भी तेजी से बायोटैक फसलें अपना रहे हैं।

पहली पीढ़ी की बायोटैक फसलों की जगह आ रही हैं दूसरी पीढ़ी की अधिक उपज वाली फसलें

पहली पीढ़ी की RR® सोयाबीन का विकास जीनगन–प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल से किया गया था, जबकि नई 'आररेडी 2 यील्ड™' किस्म की सोयाबीन, उनसे बेहतर और अधिक कारगर *एग्रोबैक्टीरियम*–निवेशन–प्रौद्योगिकी अपनाकर विकसित की गई है। सोयाबीन का आनुवंशिक मानचित्र बना लिया गया है, जिससे सोयाबीन के डी एन ए में उन जीन यानी वंशाणुओं की पहचान करने में आसानी हुई, जो उपज बढ़ाती है। साथ ही यह भी पता लगा लिया गया कि सोयाबीन की डी एन ए में किस जगह इन वंशाणु का निवेश करना है। यह वंशाणु है 'एम ओ एन–89788'। ये उपज बढ़ाने वाले वंशाणु 'ट्रांसजेनिक' यानी पारजीनी नहीं हैं, क्योंकि उन्हें सोयाबीन की दूसरी किस्मों से ही लिया गया है और वनस्पति–जगत से बाहर के पराये वंशाणु नहीं हैं। हालांकि सोयाबीन की जीनांतरित किस्में भी विकास के विविध चरणों में हैं। पहली पीढ़ी की बायोटैक सोयाबीन RR® सोयाबीन की तुलनामें दूसरी पीढ़ी की 'R Ready 2 Yield™' किस्म की बायोटैक सोयाबीन ने 2004 से 2007 के फील्ड ट्राइलों में लगातार 7 प्रतिशत से 11 प्रतिशत तक अधिक पैदावार दिखाई, क्योंकि इसमें उपज बढ़ाने का गुण ग्लाइफोसेट–सहयता से जोड़ दिया गया है। उपज बढ़ाने के लिए कौन–से कारक जिम्मेदार हैं, इसकी जब इस 'आररेडी2 यील्ड™' किस्म की सोयाबीन के पौधों में जांच की गई तो पता चला कि पहली पीढ़ी की 'RR® सोयाबीन' की दो दाने वाली फलियों की बजाय, दूसरी पीढ़ी की किस्म में तीन दानों वाली फलियां अधिक बनती हैं। 'RR® सोयाबीन' में प्रति पौधा दानों की संख्या 85–8 थी, जबकि 'आररेडी 2 यील्ड™' किस्म की सोयाबीन के पौधों में प्रति पौधा दानों की औसत संख्या 90.5 तक बढ़ गई थी। सन् 2009 में 'आररेडी 2 यील्ड™' श्रेणी की किस्मों की अमरीका और कनाडा में 5 लाख हैक्टर में उगाकर नियंत्रित रूप में आजमाया गया और सफल परिणाम मिलने पर अब 2010 में इन दूसरी पीढ़ी की बायोटैक किस्मों को 20 से 30 लाख हैक्टर में उगाए जाने की उम्मीद है। सोयाबीन की दूसरी पीढ़ी की बायोटैक किस्मों की यह सफलता इसलिए बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि केवल सोयाबीन में ही नहीं, दूसरी अनेक फसलों में दूसरी पीढ़ी की बायोटैक किस्में विकास के विविध चरणों में हैं और सोयाबीन की 'आररेडी2यील्ड™' श्रेणी की किस्मों की सफलता से अब अन्य दूसरी पीढ़ी की बायोटैक फसलों का मार्ग प्रशस्त हो गया है। पहली पीढ़ी की बायोटैक किस्मों में मुख्य रूप से कीटव्याधियों, खरपतवारों और रोगों के प्रति रोधिता के वंशाणु निविष्ट किए गए थे, जबकि दूसरी पीढ़ी में इन सभी गुणों के साथ–साथ खासतौर से उपज बढ़ाने का गुण नियंत्रित करने वाले वंशाणु निविष्ट किए गए हैं।

आर्थिक प्रभाव

बायोटैक फसलें खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता/खाद्य–सुरक्षा और खाद्य की अधिक आपूर्ति करके भोजन को सबके बूते का और सबकी पहुंच का बनाने का जो अभूतपूर्व योगदान कर रही हैं उसके कई पहलू हैं। जैसे कि प्रति हैक्टर उत्पादकता बढ़ रही हैं, उत्पादन की लागत घट रही है, जुताई ज्यादा नहीं करनी पड़ती, कीटनाशी दवाएं ज्यादा नहीं छिड़कनीं पड़तीं, ट्रैक्टरों में ज्यादा डीजल/पेट्रोल नहीं खपाना पड़ता और साथ ही जलवायु–परिवर्तन के कुछ नकारात्मक दुष्प्रभाव भी बायोटैक फसलें घटाती हैं। **सन् 1996 से 2009 के दौरान 5190 करोड़ अमरीकी डालर का जो आर्थिक लाभ बायोटैक फसलों ने दुनिया को पहुंचाया, उसमें से 49.6 प्रतिशत उपज बढ़ने से और 50.4 प्रतिशत लाभ उत्पादन–लागत में कमी आने से प्राप्त हुआ। चार मुख्य बायोटैक फसलों (सोयाबीन, मक्का, कपास और कनोला) से सन् 2008 में विश्व स्तर पर 296 लाख टन की वृद्धि हुई, जो प्राप्त करने के लिए अगर बायोटैक फसलें नहीं होतीं, तो 105 लाख हैक्टर अतिरिक्त भूमि में खेती करनी होती। सन् 2008 में जो 296 लाख टन अधिक उत्पादन हुआ, उसमें से 171 लाख टन बायोटैक मक्का, 101 लाख टन बायोटैक सोयाबीन, 18 लाख टन कपास की रूई और 6 लाख टन कनोला का। सन् 1996 से 2008 तक सामूहिक फसल–उत्पादन 1671 लाख टन बढ़ा, जिसे बढ़ाने के लिए सन् 2008 की औसत उपज के अनुसार बायोटैक फसलों के बिना 626 लाख हैक्टर अधिक जमीन की जरूरत पड़ती। (ब्रुक्स और बारफुट, 2010, शीघ्र प्रकाश्य)।** इस प्रकार वर्तमान बायोटैक फसलों ने कृषि में जैव प्रौद्योगिकी की महत्ता भलीभांति स्थापित कर दी है, क्योंकि उन्होंने उत्पादकता बढ़ाई है और उत्पादन की लागत घटाई हैं और भविष्य के लिए यह आशा जगाई है कि दुनिया में सबसे ज्यादा खाए जाने वाले चावल और गेहूं और गरीबों की कसावा जैसी फसलें भी जैव प्रौद्योगिकी के उपयोग से सफलता के ऐसे ही प्रतिमान बनायेंगीं।

बायोटैक फसलों का 1996 से 2008 के दौरान विश्व पर क्या प्रभाव पड़ा है, इसका सबसे ताजा सर्वेक्षण ब्रुक्स और बारफुट ने किया है और इसके अनुसार **2008 में बायोटैक फसलों से दुनिया के किसानों को 9 अरब 20 करोड़ डालर का फायदा हुआ। इसमें से विकासशील देशों के किसानों को 4 अरब 70 करोड़ डालर का और औद्योगिक देशों को 4 अरब 50 करोड़ डालर का आर्थिक लाभ हुआ। 1996 से 2008 तक कुल फायदा 51 अरब 90 करोड़ डालर का हुआ, जिसमें से 26 अरब 10 करोड़ डालर विकासशील देश के किसानों का और 25 अरब 80 करोड़ डालर आर्थिक लाभ औद्योगिक देशों का हुआ। इनमें अर्जेंटिना में बायोटैक सोयाबीन की साल में दो फसलें लेने के आर्थिक लाभ भी शामिल किए गए हैं।**

''व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009''

कीटनाशियों के इस्तेमाल में कमी

सघन खेती शुरू हुई तो उसमें कीटव्याधियों की रोकथाम के लिए कीटनाशी दवाएं छिड़की गईं, जिनके जहर से मिट्टी, पानी और हवा में प्रदूषण फैला और पर्यावरण प्रभावित हुआ। **जैव प्रौद्योगिकी इन दुष्प्रभावों से बचा सकती है। बायोटैक फसलों के इस्तेमाल के पहले दशक से यह साबित हो गया कि उनके कारण कीटनशी दवाएं कम छिड़कनीं पड़ीं। जुताई कम या बिल्कुल न होने से जीवाश्मी ईंधनों के इस्तेमाल में कटौती हुई और कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में कटौती हुई। इसके साथ ही खरपतवार– सह किस्मों ने भी खरपतवार हटाने के श्रम और समय की बचत की और मिट्टी का संरक्षण किया। सन् 1996 से 2008 के दौरान कुल मिलाकर पूरी दुनिया में बायोटैक देशों में 3560 किलोग्राम कीटनाशी दवाएं कम इस्तेमाल हुईं और 8.4 प्रतिशत कीटनाशियों की कटौती हुई।** इससे पर्यावरण पर दुष्प्रभावों में 16.1 प्रतिशत की कमी हुई। इसकी जांच के लिए वैज्ञानिकों के पास 'ई' आई क्यू' यानी 'एन्वायरनमेंट इम्पैक्ट कुशेंट' नापने का तरीका है। इससे किसी भी सक्रिय अवयव का आबोहवा पर क्या असर पड़ा, इसकी ठीक–ठीक पैमाइश की जा सकती है। **इस परीक्षण के 2008 के नतीजे ही बताते हैं कि कीटनाशी दवाओं की इस एक साल में ही 9.6 प्रतिशत की बचत हुई यानी 346 लाख किलोग्राम कीटनाशी दवा कम छिड़कनी पड़ी। ई आई क्यू भी 18.2 प्रतिशत कम आया यानी पर्यावरण पर बुरा असर बहुत कम हुआ।** (ब्रुक्स और बारफुट, 2010 शीघ्र प्रकाश्य)

कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में कटौती

जैवप्रौद्योगिकी ग्रीनहाउस गैसों, खासतौर से कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में कमी लाकर प्रदूषण कम करती है और पर्यावरण को सुधारती है तथा जलवायु–परिवर्तन के नकारात्मक प्रभाव कम करती है। यह दो तरह से होता है। एक तो कम कीटनाशी और कम खरपतवारनाशी छिड़कने पड़ते हैं, जिससे जीवाश्मी ईंधन की बचत होती है। अकेले 2008 में बायोटैक फसलों के कारण कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में 122 करोड़ किलोग्राम की कटौती हुई जो सड़क पर से 5 लाख 30 हजार कारों को हटा देने के बराबर है। दूसरे खरपतवार–सह बायोटैक फसलों के उपयोग से जुताई की जरूरत नगण्य हो गई या बिल्कुल नहीं पड़ी, लेकिन खाद्य, पशु–आहार और रेशे के लिए फसलें बराबर उगाई जाती रहीं। इन फसलों ने जो कार्बन सोखा वह अकेले 2008 में 132 करोड़ किलोग्राम कार्बन डाइऑक्साइड को कम करने के बराबर था। **इस प्रकार सन् 2008 में कार्बन के अवशोषण से कुल 144 किलोग्राम कार्बन डाइऑक्साइड की कटौती हुई, जिसका अर्थ है कि प्रदूषण से पर्यावरण इतना बचा मानो सड़क पर से 69 लाख 40 हजार कारें हटा दी गई हों। (ब्रुक्स और बारफुट, 2010, शीघ्र प्रकाश्य)।**

खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता और खाद्य सुरक्षा

सन् 2008 की आर्थिक मंदी में कृषि निर्यात करने वाले प्रमुख देशों ने खाद्य निर्यात बंद कर दिया। जैसे कि थाइलैंड और वियतनाम ने चावल के निर्यात पर रोक लगा दी और अर्जेंटिना ने सोयाबीन तथा मक्का के निर्यात से हाथ खींच लिया। जो विकासशील देश खाद्यान्न के लिए निर्यात पर निर्भर थे उन्हें मुश्किलों का सामना करना पड़ा, क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय मंडी में सभी जिंसों के दाम ऊंचे चढ़ गए। उन्हें सीधे कृषि निर्यातक देशों से सौदे करने पड़े। अतः ऐसे सभी देश ये कोशिश कर रहे हैं कि जिन फसलों का मानव आहार में सबसे अधिक उपयोग होता है, उन फसलों की उत्पादकता बढ़ाकर वे खाद्यान्न में आत्मनिर्भर बनें। उदाहरण के लिए जो फिलिपींस विश्व में सबसे अधिक चावल आयात करता था, वह अब 2010 में अपनी जरूरत का 98 प्रतिशत चावल अपने देश में ही पैदा करना चाहता है। भारत, मलेशिया, होंडुरास, कोलंबिया और सेनीगल जैसे देशों ने भी अपने–अपने यहां मुख्य भोजन वाली फसलों में आत्मनिर्भरता बनाए रखने और प्राप्त करने के लिए नई रणनीतियां बनाई हैं। वे सबको खाद्य उपलब्ध कराने और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए उत्पादन और प्रति हैक्टर उत्पादकता बढ़ाने पर पूरा जोर दे रहा है और कृषि में पूंजी–निवेश के बढ़ाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय संगठन भी आगे आ रहे हैं। इन सभी रणनीतियों का बायोटैक फसलों के प्रसार पर सकारात्मक प्रभाव पड़ने की आशा है। चीन ने काफी पहले से खाद्य, पशु–आहार और रेशे में आत्मनिर्भर होने और पराश्रय से मुक्त होने की योजना बनाई और उस पर अमल किया और इनकी उपज बढ़ाने के लिए उसने अपनी रणनीति में बायोटैक फसलों को विकसित करने पर पूरा ध्यान दिया। इसीलिए चीन ने बायोटैक धान और बायोटैक मक्का की किस्में अपने ही देश में विकसित करके उन्हें अपनाने पर बल दिया है। चीन को इस मामले में आदर्श मानकर अन्य विकासशील देशों को उसका अनुकरण करना चाहिए। चीन ने अपने यहां बायोटैक धान और बायोटैक मक्का को उगाने की जो स्वीकृति दी है, उससे अवश्य ही बायोटैक फसलों को विश्व स्तर पर अधिकाधिक देशों में अपनाने का उत्साह बढ़ेगा। इसका एक असर तो यह होगा कि बायोटैक फसलों को नियामक एजेंसियां स्वीकृति प्रदान करने की प्रक्रिया को सुधारेंगीं, ताकि अनावश्यक विलंब न हो; साथ ही दक्षिणी और उत्तरी दुनिया के बीच इस बारे में पारस्परिक सहयोग का वातावरण बनेगा और परस्पर भागीदारी बढ़ेगी। जिनके पास जैवप्रौद्योगिकी नहीं है, उन्हें यह तकनीक हासिल करने में अधिक दिक्कतें नहीं होंगीं। सरकारी और निजी संस्थाओं में सौहार्दपूर्ण भागीदारी का विकास होगा, इत्यादि (द इकोनोमिक, 2009 सी)।

''व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009''

विश्व की आधी से अधिक आबादी 25 देशों में रहती है, जहां बायोटैक फसलें कुल मिलाकर 1340 लाख हैक्टर में उगाई जा रही हैं और उस तरह दुनिया की कुल 150 करोड़ हैक्टर (डेढ़ अरब हैक्टर) कृषि भूमि में से 9 प्रतिशत भूमि में बायोटैक फसलें लहलहा रही हैं

सन् 2009 में दुनिया की आबादी 6.7 अरब के करीब थी, यानी 670 करोड़। इसमें से लगभग आधी आबादी 54 प्रतिशत यानी 360 करोड़ (3.6 अरब) उन 25 देशों में रह रही थी, जहां 2009 में बायोटैक फसलें उगाई जा रही थीं और उनके अनेक बहुमुखी लाभों का हिसाब लगाएं तो 920 करोड़ (9.2 अरब) डालर का फायदा पूरी दुनिया को अकेले सन् 2008 में पहुंचा। यहां यह भी ध्यान देने योग्य है कि विश्व की डेढ़ अरब कृषि भूमि की लगभग आधी (52 प्रतिशत) यानी 77 करोड़ 60 लाख हैक्टर (776 मि. हैक्टर) कृषि भूमि उन्हीं 25 देशों में हैं, जहां अधिकृत रूप से स्वीकृत बायोटैक फसलें उगाई जा रही थीं। **सन् 2009 में 13 करोड़ 40 लाख (134 मि. हैक्टर) भूमि में उगाई जा रही बायोटैक फसलों ने विश्व की डेढ़ अरब कृषि भूमि के लगभग 9 प्रतिशत पर अपना वर्चस्व बना लिया था।**

बायोटैक फसलों से प्राप्त खाद्य–उत्पादों की खपत

बायोटैक फसलों के आलोचक यह भ्रम फैलाने की कोशिश करते हैं कि बायोटैक फसलों के उत्पाद कहीं भी खाए नहीं जा रहे और उनका उपयोग केवल पशु–आहार और रेशों के रूप में किया जा रहा है। इसके विपरीत यह आकलित किया गया है कि अमरीका और कनाडा में बिक रहे 70 प्रतिशत डिब्बाबंद आहार में स्वीकृत जी एम घटक हैं। इस प्रकार लगभग 30 करोड़ लोग उत्तरी अमरीका में पिछले दस सालों से बायोटैक फसलों से बनाए गए खाद्य पदार्थ खा रहे हैं और अभी तक उनमें से किसी ने भी किसी भी प्रकार की गड़बड़ी की शिकायत नहीं की है। जिन बायोटैक फसलों से अमरीका में खाद्य पदार्थ बनाए जा रहे हैं, उनमें शामिल हैंः सोयाबीन, मक्का, बिनौलों का तेल, कनोला, पपीता और स्क्वैश। दक्षिण अफ्रीका में तो बी टी सफेद मक्का मानव आहार में ही इस्तेमाल हो रही है, क्योंकि वहां सफेद मक्का मनुष्यों का परंपरागत आहार है। पीली मक्का पशुओं को दाने के रूप में खिलाई जाती है। 2001 से ही दक्षिण अफ्रीका में बी टी सफेद मक्का के तमाम व्यंजन खाए जा रहे हैं और वहां सफेद मक्का सन् 2009 में कुल 15 लाख हैक्टर में उगाई जा रही थी, जिसमें से दो तिहाई क्षेत्र में बी टी सफेद मक्का की खेती हो रही थी। इसी प्रकार दक्षिण अफ्रीका में बायोटैक सोयाबीन के उत्पाद और बायोटैक कपास के बिनौलों का तेल भी मानव–आहार में इस्तेमाल किया जा रहा है। अंत में चीन का उदाहरण लें, जहां 2006 से बायोटैक पपीता खाया जा रहा है और 2009 में दुनिया के सबसे महत्वपूर्ण खाद्यान्न बायोटैक चावल को उगाने की स्वीकृति दी गई है। इसके अतिरिक्त अनेक देशों में बायोटैक फसलों का और उनके उत्पादों का आयात किया जा रहा है और वहां अभी तक ऐसी कोई घटना नहीं हुई है, जिसे लेकर मानव स्वास्थ्य पर बायोटैक फसलों के दुष्प्रभाव की चिंता व्यक्त की जाए।

विश्व के 25 देशों ने अपने यहां बायोटैक फसलें उगाने की स्वीकृति दी और 32 देशों में बायोटैक फसलें और उनके उत्पाद आयात किए जा रहे हैं, यानी विश्व के 57 देशों ने बायोटैक फसलें या उनके उत्पाद स्वीकार किए हैं और उन्हें इस्तेमाल कर रहे हैं

सन् 2009 में जहां 25 देशों ने अपने यहां बायोटैक फसलें उगाई वहीं 32 देशों में बायोटैक फसलों को मानव–आहार और पशु–आहार के रूप में इस्तेमाल करने के लिए उनकी नियामक संस्थाओं ने स्वीकृति प्रदान की। इस तरह कुल 57 देश दुनिया में बायोटैक फसलों को इस्तेमाल कर रहे हैं। सन् 1996 से ही ये बायोटैक फसलें 57 देशों में पर्यावरण में विमोचित कर दी गई हैं। 24 फसलों के लिए अब तक 155 ईवेंटों[1] के लिए 762 स्वीकृतियां जारी की जा चुकी हैं। इस प्रकार बायोटैक फसलें मानव–आहार और पशु आहार के लिए और पर्यावरण में विमोचित करने के लिए विश्व के 57 देशों में इस्तेमाल हो रही हैं, जिनमें **जापान जैसा प्रमुख खाद्य आयातक देश भी शामिल है जो अपने यहां कोई बायोटैक फसल नहीं उगाता।** बायोटैक फसलों की जिन 57 देशों ने स्वीकृति प्रदान की है, उनमें सबसे ऊपर है जापान और उसके बाद हैं अमरीका, कनाडा, दक्षिण कोरिया, मैक्सिको, आस्ट्रेलिया, फिलिपींस, यूरोपी संघ, न्यूजीलैंड और चीन। सबसे अधिक ईवेंट (पादप जीनांतरण) मक्का के लिए स्वीकृत किए गए हैं (49)। इसके बाद कपास (29), कनोला (15), आलू (10) और सोयाबीन (9)। जिस ईवेंट को अधिकतर देशों में स्वीकृति मिली है, वह है खरपात सह सोयाबीन–ईवेंट जी टी एस–40–3–2, जिसे 23 स्वीकृतियां मिल चुकी हैं। यहां यूरोपी संघ की 27 स्वीकृतियों का एक ही माना गया है। इसके बाद 21 स्वीकृतियां खरपात–सह मक्का और कीटरोधी मक्का, प्रत्येक को मिली हैं और विश्व में 16 स्वीकृतियां कीटरोधी कपास (एम ओ एन 531/757/1076) को मिली है।

---

1. 'ईवेंट' का मतलब यह है कि डीएनए का कोई भी पुनर्संयोजन, जो किसी एक पादप कोशिका में हुआ हो, जिसे फिर पूरा जीनांतरित पौधा बनाने के लिए पनपाया जाता है। हर कोशका जिसमें कोई जीन यानी वंशाणु डाल दिया गया हो, एक ईवेंट मानी जाती है। पौधों का कोई भी वंशक्रम जब उस जीनांतरित कोशिका से पनपाया जाता है तो उसे बायोटैक फसल या जी एम फसल माना जाता है। इन ईवेंटों के नाम नियामक प्राधिकरण के विशेषज्ञ और ओ ई सी डी '(ऑर्गनाइजेशन फॉर इकोनोमिक कोऑपरेशन एंड डेवलपमेंट)' जैसे संगठन तय करते हैं।

''व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009''

राष्ट्रीय आर्थिक विकास में वृद्धि––बायोटैक फसलों का संभावित योगदान

जो देश कृषि प्रधान देश हैं, वहां कृषि–वृद्धि के बिना आर्थिक–वृद्धि की कल्पना भी नहीं की जा सकती। सन् 2008 में जारी की गई विश्व बैंक की रिपोर्ट में निष्कर्षतः यह लिखा गया है: *कृषि प्रधान देशों में आर्थिक वृद्धि का आधार कृषि है और वहां छोटी जोतों पर उत्पादकता–क्रांति होना बेहद जरूरी है।* खाद्य, पशु–आहार और रेशा प्राप्त करने का मुख्य स्रोत पूरे विश्व में फसलें ही हैं और प्रति वर्ष दुनिया में साढ़े छह अरब (साढ़े 600 करोड़) टन फसलें पैदा की जाती हैं। इतिहास गवाह है कि फसलों की उत्पादकता और ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक वृद्धि में प्रौद्योगिकी का ठोस योगदान हो सकता है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण तीसादिक में अमरीका में संकर मक्का और साठादिक में विकासशील देशों में गेहूं और चावल में आई हरितक्रांति से मिलता है। साठादिक में गेहूं की अधबौनी किस्में नई प्रौद्योगिकी के रूप में अपनाई गईं और यह प्रौद्योगिकी हरितक्रांति के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में तथा राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक वृद्धि का इंजन बन गई। इसने पूरे विश्व में लगभग 100 करोड़ लोगों को भुखमरी से बचाया, जिसके लिए डा. नॉर्मन बोरलोग को 1970 में विश्व शांति का नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। बायोटैक फसलों के सबसे बड़े समर्थक थे, डा. नॉर्मन बोरलोग और वे 'आईएसएएए' के बड़े उत्साही संरक्षक थे। चीन में बी टी कपास पहले ही उगाया जा रहा है और इससे वहां लगभग एक अरब डालर और भारत में लगभग 1.8 अरब डालर का आर्थिक लाभ हो चुका है। बी टी धान को चीन में स्वीकृति मिल चुकी है और इसकी खेती से वहां के 1100 लाख गरीब परिवारों को अनुमानतः प्रति हैक्टर 100 डालर का आर्थिक लाभ होगा। यदि एक परिवार के चार सदस्य भी माने जाएं तो बी टी धान की प्रौद्योगिकी से चीन में 4400 लाख गरीब लोग लाभान्वित होंगे। **सारांश यह है कि बायोटैक फसलें उत्पादकता और आय में वृद्धि का सार्थक योगदान पहले ही प्रमाणित कर चुकी हैं और इस तरह वे आर्थिक वृद्धि का इंजन बन सकती हैं, जिससे दुनिया में व्याप्त आर्थिक संकट के समय विश्व के छोटे और साधनहीन किसानों की गरीबी दूर करने में भारी मदद मिलेगी और बी टी धान जैसी बायोटैक फसलों की भावी संभावना तो बहुत बड़ी हैं।** इस समय औद्योगिक देशों ने जो अनावश्यक और अतार्किक कठोर नियम बना रखें हैं, वही लागू किए जाने से विकासशील देशों को 'गोल्डन राइस' जैसे बायोटैक उत्पादों का लाभ नहीं मिल रहा, जबकि इस बीच लाखों लोग भूख के कारण अपनी जान गंवा रहे हैं। **यह एक जैविक विडम्बना है, जहां नियामक प्रणालियां 'साधन की बजाय लक्ष्य' बन गई हैं।**

2009 में विश्व में बायोटैक बीजों का बाजार ही 10.5 अरब डालर का हो चुका है और व्यापारिक बायोटैक मक्का, सोयाबीन के दाने और कपास की कीमत 2008 में 130 अरब डालर कूती गई थी

सन् 2009 में 'क्रोपनोसिस' ने बायोटैक फसलों के वैश्विक कारोबार की कीमत 10.5 अरब डालर कूती थी, जो कि सन् 2008 के मुकाबले 9 अरब डालर अधिक है। यह 2009 के 52.2 अरब डालर के वैश्विक फसल–रक्षा कारोबार का 20 प्रतिशत है और 34 अरब डालर के वैश्विक व्यापारिक बीज व्यापार का लगभग 30 प्रतिशत है। 10.5 अरब डालर के वैश्विक बायोटैक फसल कारोबार में बायोटैक मक्का का योगदान 5.3 अरब डालर का है, जो कि 2008 के मुकाबले 48 प्रतिशत बढ़ा है और विश्व के फसल कारोबार का 50 प्रतिशत है। बायोटैक सोयाबीन का इस व्यापार में 3.9 अरब डालर का योग है, जोकि 2008 के 37.2 प्रतिशत योगदान के बराबर है। बायोटैक कपास का विश्व के फसल व्यापार में 1.1 अरब डालर का हिस्सा है यानी 10.5 प्रतिशत। अंत में बायोटैक कनोला का योगदान है 30 करोड़ डालर का जो कुल फसल व्यापार का 3 प्रतिशत है। बायोटैक फसलों के 10.5 अरब विश्व व्यापार का 8.2 अरब डालर (78 प्रतिशत) औद्योगिक देशों में था और 22 प्रतिशत यानी 2.3 अरब डालर विकासशील देशों में। बायोटैक फसलों का यह बाजार–मूल्य उनके बीजों की कीमत और उनकी प्रौद्योगिकी की कोई फीस, यदि है तो उसके आधार पर आकलित की गई है। सन् 1996 में जब पहली बार बायोटैक फसलें व्यापारीकृत हुई थीं, तब से लेकर 12 वर्षों का कुल बाजार मूल्य लगाएं तो 62.3 अरब डालर बैठता है। सन् 2010 में इस बायोटैक फसल–बाजार का मूल्य अनुमानतः 11 अरब डालर है। अकेले बायोटैक बीज के 10.5 अरब डालर बाजार मूल्य की तुलना में इन बीजों से उगाई गई बायोटैक फसलों और उनके उत्पादों का बाजार मूल्य लगाएं तो वह कई गुना बैठता है। अकेले सन् 2008 में यह बाजार–मूल्य विश्व में 130 अरब डालर का था और इसमें प्रति वर्ष 10 से 15 प्रतिशत की बढ़त होने का अनुमान है।

बायोटैक फसलों की भावी संभावनाएं – 2010–2015

विश्व में फसलें ही खाद्य, पशु आहार और रेशे की मुख्य स्रोत हैं और वर्ष भर में साढ़े छह अरब मीटरिक टन के करीब फसलें पैदा की जाती हैं। इतिहास बताता है कि फसलों की उत्पादकता, ग्रामीण क्षेत्रों की

आर्थिक वृद्धि, खाद्य–सुरक्षा और भूख, कुपोषण तथा गरीबी को हटाने में सबसे बड़ा योगदान प्रौद्योगिकी का रहा है। 2010 से 2015 के दौरान विश्व समुदाय के सामने सबसे बड़ी चुनौती है, 2015 तक संयुक्त राष्ट्र के सहस्राब्दी विकास लक्ष्य को प्राप्त करना, जिसमें 2050 तक खाद्य, आहार और रेशों की पैदावार बढ़ाकर दूनी करनी होगी और उसके लिए, संसाधनों, खासतौर से पानी, जीवाश्मी ईंधन और नाइट्रोजन का कम से कम इस्तेमाल करना होगा। खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करके भूख, कुपोषण और गरीबी के उन्मूलन के लिए परंपरागत तथा बायोटैक दोनों प्रौद्योगिकियों का उपयोग करते हुए फसलों की उत्पादकता का ठोस टिकाऊ सघनीकरण जरूरी होगा।

बायोटैक फसलों को 2010 से 2015 के बीच, खासतौर से आईएसएएए के भागीदार विकासशील देशों में अपनाना तीन कारकों पर निर्भर होगाः

- उचित उत्तरदायी तथा लागत–समय की दृष्टि से कारगर नियामक प्रणालियों की स्थापना।
- बायोटैक फसलों के विकास के लिए और उन्हें अपनाने के लिए मजबूत राजनीतिक इच्छा और वित्तीय सहायता जुटाना ताकि ये फसलें खाद्य, पशु आहार और रेशों की आपूर्ति सबके बूते की कीमत पर सुनिश्चित कर सकें।
- उचित बायोटैक फसलों की लगातार और विस्तृत आपूर्ति, खासतौर से एशिया, लैटिन अमरीका और अफ्रीका के देशों में सुनिश्चित करना।

1. प्रभावशाली और उत्तरदायी नियामक प्रणाली

उचित, उत्तरदायी और लागत समय की दृष्टि से कारगर नियामक प्रणाली की तत्काल आवश्यकता है, जो अधिकतर विकासशील देशों के सीमित साधनों से ही उपलब्ध हो, भले ही कड़े नियम हों, लेकिन कष्टसाध्य न हों। अधिकतर विकासशील देशों में बायोटैक फसलों को अपनाने में यही सबसे बड़ी बाधा है। पिछले 14 वर्षों का बायोटैक फसलों के लिए विकासशील देशों में बनी नियामक प्रणालियों का अनुभव बहुत कटु रहा है, जिनमें **अनावश्यक लंबी कागजी कार्रवाई और कठोर नियमों की भरमार है और जिनका खर्चा ही 10 लाख अमरीकी डालर या इससे भी अधिक बैठता है, जो अधिकतर विकासशील देशों में उपलब्ध साधनों के बूते का नहीं है।** इस समय जो नियामक प्रणालियां प्रचलित हैं, वे असल में कोई 15 साल पहले खासतौर से अमीर देशों के लिए बनी थीं, जिनके पास इस नई प्रौद्योगिकी का खर्चा उठाने के पर्याप्त साधन हैं, जबकि इन नियामक प्रणालियों का बोझ अल्प साधन वाले विकासशील देश नहीं उठा सकते। अतः विगत चौदह वर्षों के अनुभव से सबक लेकर विकासशील देशों में ऐसी नियामक प्रणालियां विकसित करनी होंगीं, जो उत्तरदायी हों और भले ही कड़ी हों, मगर कष्टसाध्य न हों और बहुत महंगी न हों तथा विकासशील देश अपने सीमित साधनों से ही जिनका पालन कर सकें। इस काम को सबसे ऊंची प्राथमिकता देनी होगी।

2. बायोटैक फसलों के विकास, स्वीकृति और उन्हें अपनाने के लिए राजनीतिक, वित्तीय तथा वैज्ञानिक प्रोत्साहन

सन् 2008 में खाद्यान्नों की महंगाई अत्यंत अप्रत्याशित रूप से कष्टदायक थी, जिसके कारण 30 से अधिक विकासशील देशों में दंगे भड़क उठे और दो देशों हाइती तथा मैडागास्कर में तो सरकारें पलट गईं। इससे विश्व–समुदाय को यह सबक जरूर मिला कि खाद्य और जन–सुरक्षा घनिष्ट रूप से जुड़े हैं और 'भूख इंसान को हैवान' बना सकती है। यही कारण है कि अब विकासशील देशों की इस क्षेत्र में मदद के लिए अनेक दानदाता समूह और अंतर्राष्ट्रीय संगठन आगे आए हैं और विकासशील देशों में राजनीतिक इच्छा भी जगी है तथा वैज्ञानिक समुदाय भी सजग हुआ है। यही नहीं विश्व– समुदाय ने कृषि की जीवन निर्वाहक क्षमता को लेकर भी चेतना जगी है तथा एक न्यायपूर्ण और शांतिपूर्ण विश्व के निर्माण में कृषि की भूमिका को विश्वव्यापी मान्यता मिली है। सन् 2008 और 2009 में विश्व के नेताओं, राजनीतिज्ञों, नीति–निर्माताओं और अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक समुदायों के वक्तव्यों के निम्नलिखित उद्धरण 2008 और 2009 में पनपी राजनीतिक इच्छा और व्यापक समर्थन के ज्वलंत उदाहरण हैं। अब आवश्यकता यह है कि ये सब अपनी कथनी को करनी में बदलें:

''व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009''

- **सन् 2008 में जून में चीन के प्रधानमंत्री वेन जिआबाओ ने चीन की विज्ञान अकादमी के समक्ष अपने संबोधन में फसलों की जैवप्रौद्योगिकी को चीन में अपनाए जाने की प्रबल राजनीतिक इच्छा व्यक्त की थी और अगले 12 सालों में फसलों की प्रौद्योगिकी में सुधार के लिए 3.5 अरब अमरीकी डालर के अतिरिक्त प्रावधान की घोषणा की थीः 'खाद्य समस्या को सुलझाने के लिए हमें विज्ञान और प्रौद्योगिकी के उन्नत उपायों को अपनाना होगा जैव प्रौद्योगिकी को भी और जी एम को भी।'** बाद में अक्टूबर 2008 में एक बार फिर वेन जिआबाओ ने बायोटैक फसलों के लिए अपना समर्थन दुहराया और इस प्रौद्योगिकी पर बल दियाः **''मैं जीनियागारी का प्रबलता से समर्थन करता हूं कि हमें इस बारे में पूरे प्रयास करने होंगे। हाल में पूरी दुनिया में खाद्यान्न की कमी ने मेरे इस विश्वास को फिर से मजबूत किया है।''** चीनी कृषि विज्ञान अकादमी के जैव प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान के पूर्व निदेशक डा. डफांग हुआंग ने यह निष्कर्ष घोषित किया था कि **''खाद्यान्न की बढ़ती मांग पूरी करने के लिए जी एम चावल ही एकमात्र रास्ता है।'' बायोटैक फसलों के प्रति चीन की इस प्रतिबद्धता ने ही 27 नवंबर 2001 को बायोटैक मक्का और बायोटैक धान की खेती के लिए जैव सुरक्षा प्रमाणपत्र' जारी करवाया।**

- **भारत के प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह**

  तीन जनवरी 2010 को केरल में तिरुवअनंतपुरम में इंडियन साइंस कांग्रेस के 97वें अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए डा. मनमोहन सिंह ने भारत में बीटी कपास की अपार सफलता की प्रशंसा की और उन्होंने भारत में प्रमुख फसलों की उपज बढ़ाने के लिए जैव प्रौद्योगिकी की आवश्यकता पर जोर दिया। उनका यह वक्तव्य विशेष महत्व रखता है क्योंकि भारतीय विज्ञान कांग्रेस भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित प्रतिष्ठित संस्था है और प्रधानमंत्री जी का व्याख्यान था ''21वीं सदी में राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की चुनौतियां।'' उन्होंने इस व्याख्यान में कहा ''**जैव प्रौद्योगिकी की प्रगति का लाभ उठाकर हम अपनी प्रमुख फसलों की उपज में अत्यधिक सुधार ला सकते हैं, क्योंकि यह प्रौद्योगिकी फसलों में कीटव्याधियों और नमी की कमी के प्रति रोधिता पैदा कर सकते हैं। बी टी कपास का देश में अच्छा स्वागत हुआ और उसने कपास की पैदावार में बड़ा फर्क ला दिया। आनुवंशिक रूपांतरण की प्रौद्योगिकी को खाद्य फसलों में भी इस्तेमाल किया जा रहा है, हालांकि इससे सुरक्षा के तर्कसंगत प्रश्न उठते हैं। हमें इन पर पूरा ध्यान देना होगा और वैज्ञानिक कसौटियों पर आधारित उचित नियामक नियंत्रण की व्यवस्था करनी होगी। अतः पूरी सावधानी बरतते हुए हमें जैव प्रौद्योगिकी की उन सभी संभावनाओं का उपयोग करना है जो जलवायु परिवर्तन के दबाव से निपटते हुए हमारी खाद्य सुरक्षा को बढ़ाए।''**

- भारत के पूर्व वित्त मंत्री श्री पी. चिदंबरम् ने भारतीय बी टी कपास की सफलता को खाद्य फसलों में भी दुहराने का आह्वान करते हुए यह आशा व्यक्त की कि भारत इस प्रौद्योगिकी को अपनाकर खाद्यान्न की आवश्यकताएं पूरी करने में आत्मनिर्भर हो सकता है। उन्होंने कहा, **''कृषि में जैव प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग महत्वपूर्ण है। जो बी टी कपास में हुआ, वैसा ही खाद्य उत्पादन बढ़ाने में भी होना चाहिए।'' (जेम्स, 2008)**

- सितंबर, 2009 में भारत के नियामक निकाय, 'जी ई ए सी' ने भारत सरकार के पास बी टी बैंगन के व्यापारीकरण की स्वीकृति का अनुमोदन भिजवाया। इसका बहुत महत्व है क्योंकि बी टी बैंगन भारत की पहली खाद्य फसल है जिसे भारत में उगाने की स्वीकृति प्रदान की गई। जब यह संक्षेप मुद्रण के लिए भेजा जा रहा था, तो यह स्वीकृति भारत सरकार के पास विचारार्थ लंबित थी, ताकि उसे अंतिम स्वीकृति मिल सके। 23 नवंबर 2001 को राज्यसभा में बी टी बैंगन के विमोचन पर उठाए गए एक प्रश्न के उत्तर में 'पर्यावरण और वन मंत्री' श्री जयराम रमेश ने अपने वक्तव्य में कहा, **''बी टी बैंगन पर इसकी सुरक्षा, उपयोगिता और शस्यात्मक निष्पादन के लिए 50 से अधिक प्रक्षेत्र–परीक्षण किए गए हैं, जिनके सम्मिलित परिणामों से यह निष्कर्ष निकाला गया कि बी टी बैंगन की फसल का फलवेधक और तनावेधक से कारगर बचाव होता है जो कि बैंगन की प्रमुख कीटव्याधियां हैं। इससे किसानों और व्यापारियों दोनों को आर्थिक लाभ होता है, क्योंकि मंडी में बेचने लायक अधिक उपज मिलती है और कीटनाशियों का कम छिड़काव करना पड़ता है। (रमेश, 2009)।**

- सितंबर 2009 में जी ई ए सी द्वारा बी टी बैंगन की स्वीकृति प्रदान करने के बाद उस पर अपनी प्रतिकिया व्यक्त करते हुए भारत के विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्री श्री पृथ्वीराज चव्हाण ने कहा कि, ''इस प्रौद्योगिकी का सबसे बड़ा फायदा यह है कि इसकी वजह से कीटव्याधियों की रोकथाम के लिए रासायनिक दवाओं का इस्तेमाल नहीं करना

पड़ता, जिससे यह पर्यावरण के लिए तथा मानव–आहार के लिए सुरक्षित प्रौद्योगिकी साबित होती है।'' आगे उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि ***''मुझे पूरा विश्वास है कि सब्जी की पहली बायोटैक फसल बी टी बैंगन का विकास सही समय पर हुआ है और यह उचित है।''*** साथ ही उन्होंने यह भी बताया कि ***''बी टी फसलें दुनिया में सन् 1996 से ही उगाई जा रही हैं और उनका स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है''*** (चव्हाण, पी. 2008)।

- ***यूरोपियन कमीशन*** का कहना था कि ***''जी एम फसलें खाद्य संकट के दुष्प्रभावों के निराकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।''*** (एडम, 2008)
- **विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू एच ओ) ने बायोटैक** फसलों का महत्व रेखांकित किया, क्योंकि इनसे अधिक पोषक आहार उपलब्ध होगा तथा जनस्वास्थ्य में सुधार की दृष्टि से इनमें बड़ी संभावनाएं हैं, क्योंकि ये फसलें खाद्य पदार्थों की एलर्जी पैदा करने की कमी दूर करेंगीं और उत्पादन–प्रणालियों की क्षमता सुधारेंगी। (टान, 2008)
- **जुलाई 2008 में होक्काइडो, जापान में जी–8 के सदस्यों के सम्मेलन** में खाद्य–सुरक्षा प्रदान करने में बायोटैक फसलों की सार्थक भूमिका को पहली बार मान्यता दी गई। बायोटैक फसलों के बारे में जी–8 सदस्यों का वक्तव्य (जी 8, 2008) इस प्रकार था, ''***कृषि उत्पादन में उछाल लाने के लिए नई कृषि प्रौद्योगिकियों तक पहुंच बढ़नी चाहिए और अनुसंधान तथा विकास में तीव्रता आनी चाहिए; हम जैव प्रौद्योगिकी द्वारा विकसित नई किस्मों के बीज के योगदान के साथ उनके विज्ञान आधारित जोखिम विश्लेषण भी कराना चाहेंगे।***''
- **इटली, 19 जुलाई 2009, ला'आक्विला में जी–8 गुट के सदस्यों के वैश्विक खाद्य सुरक्षा के बारे में दिए गए संयुक्त वक्तव्य में अगले तीन सालों के लिए 20 अरब डालर का अनुदान देने की घोषणा की गई, ताकि** ***''सबसे गरीब मुल्कों के किसान खाद्य उत्पादन बढ़ाकर गरीबों को खुद अपना पेट भरने के लायक बनाने में मदद कर सकें।''*** इस निर्णय की अनूठी बात यह थी कि खाद्य उत्पादकता बढ़ाने और खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता पर बल दिया गया था, न कि 'खाद्य सुरक्षा' पर क्योंकि ये दोनों बातें एक–सी नहीं हैं। यहां यह कहावत याद दिलाई गई कि **''किसी आदमी को एक ही दिन खिलाना है तो उसे मछली दे दो, लेकिन जीवनभर उसके आहार की व्यवस्था करनी है, तो उसे मछली पकड़ना सिखाओ।''** **जी 8 के सदस्यों के संयुक्त वक्तव्य में कहा गया,''** ***हमें विश्व की खाद्य सुरक्षा के बारे में बहुत गहरी चिंता है, जिस पर विश्व के वित्तीय और आर्थिक संकट का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है और पिछले साल खाद्य पदार्थों की महंगाई बढ़ी है, खासतौर से उन देशों में जो भूख और गरीबी से जूझने में लगभग असमर्थ हैं। हालांकि 2008 में एक बार बहुत ऊंची जाने के बाद खाद्य पदार्थों की कीमतों में गिरावट आई है लेकिन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में वे अब भी ऊंची ही हैं और अस्थिर हैं.... इस समय मानवता को भूख और गरीबी से मुक्ति दिलाने के लिए तात्कालिक निर्णायक कदम उठाने की जरूरत है। अतः वैश्विक, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर सभी प्रासंगिक पक्षकारों को समावेशी दृष्टिकोण से मानवता के लिए खाद्य–सुरक्षा, पोषण और टिकाऊ कृषि को सर्वोच्च प्राथमिकता देने को अपने राजनीतिक एजेंडा में शामिल करना होगा। खाद्य सुरक्षा के बारे में कारगर ठोस कदम उठाने के साथ ही जलवायु–परिवर्तन के संबंध में अनुकूलन तथा निराकरण के उपाय अपनाने होंगे, ताकि जल, भूमि तथा अन्य प्राकृतिक संसाधनों और जैव विविधता के संरक्षण में टिकाऊ प्रबंधन से कामयाबी मिले। (जी–8, 2008)***
- **सन् 1970 में शांति के नोबल पुरस्कार से सम्मानित डा. नॉर्मन बोरलोग** के प्रशस्ति–पत्र में नोबल पीस प्राइज कमेटी ने लिखा था,'' ***बोरलोग ने अपनी उम्र के किसी भी दूसरे अकेले व्यक्ति से अधिक योग इस बारे में दिया कि विश्व के भूखे लोगों को रोटी मिले। हमने शांति के पुरस्कार के लिए उन्हें इसलिए चुना कि भूखों को रोटी देने से दुनिया में शांति भी स्थापित होगी। .... उन्होंने विश्व में एक नई खाद्य–स्थिति बना दी और जनसंख्या विस्फोट और खाद्य उत्पादन के बीच व्याप्त निराशाजनक स्थिति को आशाजनक स्थिति में बदलकर, दोनों की दौड़ में खाद्यान्न को आगे निकाल दिया।***'' नॉर्मन बोरलोग विश्व में बायोटैक/ जी एम फसलों के सबसे विश्वसनीय प्रबल समर्थक थे और ये मानते थे कि यह प्रौद्योगिकी दुनिया से भूख और गरीबी मिटाकर विश्व में खाद्य सुरक्षा में विशेष योग देगी। उनहोंने विचार व्यक्त किया था कि'' ***पिछले एक दशक से अधिक समय से हम पादप जैव प्रौद्योगिकी की सफलता देखते आए हैं। यह प्रौद्योगिकी पूरी दुनिया में अधिक उपज लेने में जहां किसानों की मदद कर रही है, वहीं कीटनाशियों के इस्तेमाल और मिट्टी के कटाव को भी कम कर रही है। विश्व के***

आधी से अधिक आबादी वाले देशों में पिछले दशक में जैव प्रौद्योगिकी के लाभ और इसकी निरापदता दोनों साबित हो चुके हैं। अब जरूरत इस बात की है कि जिन देशों में किसान पुरानी और कम कारगर कृषि विधियों को अपनाने के लिए मजबूत हैं, वहां के नेता कुछ हिम्मत दिखाएं। पहले हरितकांति ने की और अब जैव प्रौद्योगिकी खाद्य उत्पादन की बढ़ती मांग तो पूरी कर ही रही है, वहीं हमारे पर्यावरण को भी भावी पीढ़ियों के लिए बचाकर रख रही है (जेम्स, 2008)।

सितंबर 2009 में निधन से पहले बोरलोग ने सिनेटर रिचर्ड ल्यूगर और सिनेटर रॉबर्ट केसी के अमरीकी सीनेट में पेश किए गए 'खाद्य सुरक्षा अधिनियम' पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए 'दूसरी कृषि क्रांति' का नारा दिया था। उन्होंने कहा था, *''अभी हरितक्रांति को जीता नहीं जा सका। हमारी बढ़ती आबादी को भरपेट भोजन उपलब्ध कराने के लिए विकासशील देशों को कृषि वैज्ञानिकों शोधकर्ताओं, प्रशासकों तथा अन्य संबंधित व्यक्तियों को नए रास्ते खोजने में मदद करनी होगी .....। जो दुनिया भुला दी गई, वह मुख्य रूप से विकासशील देश वाली थी, जहां दुनिया की आधी से अधिक आबादी घोर दरिद्रता का जीवन बिता रही है, जहां भूख उसका पिंड छोड़ती ही नहीं .... सन् 2009 का खाद्य सुरक्षा अधिनियम विकासशील देशों में कृषि में सुधार करके दूसरी हतिरकांति शुरू कर सकता है ताकि इन देशों में खाद्य युरक्षा सुनिश्चित हो जाए।'' (बोरलोग, 2009)*

- **बिल गेट्स ने 19 अक्टूबर 2009 में डेस मोइनेस में वर्ल्ड फूड प्राइज सिम्पोजियम में मुख्य अभिभाषण** देते हुए बायोटैक फसलों की हिमायत करते हुए कहा था, *''हम अपनी कुछ अनुदान योजनाओं में पारजीनी विधियों को शामिल करते हैं, क्योंकि हमारा विश्वास है कि वे अकेले परंपरागत प्रजनन की अपेक्षा किसानों को नई चुनौतियों का मुकाबला करने में अधिक सहायता पहुंचा सकती हैं। ... यह सरकारों, किसानों और नागरिकों की जिम्मेदारी है कि सर्वोत्कृष्ट विज्ञान की जानकारी लेकर अपने–अपने देशों की खाद्य मांग को सबसे अच्छी तरह किस तरीके से पूरा कर सकते हैं, वही चुनें ... हमारे पास पूरा ज्ञान है, तकनीक है। हम जानते हैं कि क्या करना है। बोरलोग ने जो सपना देखा था, हम उस सपने को पूरा करने वाली पीढ़ी बनने का गौरव प्राप्त कर सकते हैं। वह सपना था, एक ऐसी दुनिया का जिसमें भूख का नामोनिशान भी न हो।'' (गेट्स, 2009)*

- 12 अक्टूबर 2009 को एफ ए ओ के महानिदेशक डा. जैक्स दूफ ने 'हाई लेबल फोरम' में यह घोषणा थी कि *''कृषि के पास इसके सिवा कोई और विकल्प नहीं है कि वह अधिक उत्पादनशील बने''* उन्होंने यह भी ध्यान दिलाया कि अब अधिक उत्पादन खेती के लायक जमीन बढ़ाने से नहीं, बल्कि उन्नत सघन कृषि से प्रति हैक्टर उपज बढ़ाने से ही मिल सकता है। उन्होंने यह विचार भी प्रकट किया कि *''जैविक खेती भूख और गरीबी मिटाने में मदद करती है, और उसे बढ़ावा दिया जाना चाहिए, लेकिन वह अकेली तेजी से बढ़ती आबादी का पेट नहीं भर सकती'' (दूफ, 2009)।*

- **खाद्य सुरक्षा पर वर्ल्ड फूड समिटः** रोम में इटली में 6 से 18 नवंबर 2009 के दौरान खाद्य सुरक्षा पर विश्व शिखर सम्मेलन आयोजित किया गया था, जिसमें विश्व के राष्ट्राध्यक्षों द्वारा हस्ताक्षरित एक घोषणा पत्र जारी किया गया था, जिसमें कृषि उत्पादन बढ़ाने की रणनीति में जैवप्रौद्योगिकी भी शामिल की गई थी। *''इस समय खाद्य उत्पादन बढ़ाने के लिए न तो अधिक जमीन मिल सकती है और न पानी। अतः अब तो कृषि उत्पादकता बढ़ाना ही एकमात्र उपाय रह गया है, ताकि खाद्य की बढ़ती मांग पूरी की जा सके। हम चाहेंगे कि उत्पादकता बढ़ाने के लिए सभी आवश्यक संसाधन उपयोग में लाए जाएं, जिसमें जैव प्रौद्योगिकी की समीक्षा, स्वीकृति और उसे अपनाना शामिल है और साथ ही अन्य नई प्रौद्योगिकियों और नवाचारों को भी अपनाया जाए, जो सुरक्षित हों, कारगर हों और पर्यावरण की दृष्टि से टिकाऊ हों। यह वक्तव्य घोषणा पत्र के सिद्धांत 3 में व्यक्त की गई रणनीतियों का हिस्सा है, जिसमें कहा गया है कि खाद्य–सुरक्षा के लिए द्विपथी दृष्टिकोण अपनाया जाए, जिसमें ये दो बातें शामिल हैं: 1. भूख से सबसे अधिक प्रभावित होने की आशंका वाले क्षेत्रों में सीधी कार्रवाई और 2. भूख और गरीबी के मूल कारणों पर प्रहार के लिए मध्यकालिक तथा दीर्घकालिक टिकाऊ कृषि, खाद्य सुरक्षा, पोषण और ग्रामीण विकास के कार्यकम लागू करना, जिनमें उचित भोजन का अधिकार सबको मिल सके। अतः इस दिशा में अग्रसर हुआ जाए।'' (वर्ल्ड समिट ऑन फूड सिक्योरिटी, 2009)।*

- हिलेरी बेन, पर्यावरण, खाद्य और ग्रामीण मामलों के मंत्री, यू के, ने प्रस्तावित किया था कि जी एम फसलें जलवायु परिवर्तन तथा जनसंख्या वृद्धि की समस्या का समाधान दे सकती हैं। उन्होंने कहा कि *''हमने पिछले साल देखा जब तेल की कीमतें चढ़ गई थीं और आस्ट्रेलिया में सूखा पड़ा था कि किस तरह यहां ब्रिटेन*

में डबलरोटी के दाम बढ़ गए थे। यानी ये चीजें कितनी एक–दूसरे पर निर्भर होती हैं, यह पता चला। .. अगले 40–50 सालों में हमें ढाई तीन अरब अतिरिक्त जनसंख्या का पेट भरना होगा, अतः मैं चाहता हूं कि ब्रिटेन की कृषि से हम जितना ज्यादा से ज्यादा खाद्य पैदा कर सकें, उतना ही अच्छा।'' मिस्टर बेन ने रेडियो–4 के 'टुडे' प्रोग्राम में कहा कि यह तो किसान ही तय करेंगे कि क्या उगाना चाहिए, *''लेकिन यह महत्वपूर्ण है कि हम नई तकनीकों की खोजबीन करके उनकी सच्चाइयों का पता लगाएं। अगर जीनांतरित फसलों की प्रौद्योगिकी योगदान कर सकती है तो समुदाय के रूप में हमारे पास एक विकल्प है, जिसे आजमाना चाहिए और दुनिया के अनेक देशों में इसको अपनाया भी जा रहा है। ... जहां तक जी एम उत्पादों की बात है एक बात तो स्पष्ट है कि बढ़ती आबादी के मद्देनजर दुनिया को ज्यादा किसानों की जरूरत पड़ेगी और आने वाले में वर्षों बहुत ज्यादा खाद्य पैदा करना पड़ेगा। जीनांतरित फसलें अधिक सूखा– सह बनाई जा सकती है और बिना कीटनाशियों के तापमान बढ़ने से जो नई–नई कीटव्याधियां पनपेंगी, उनका नियंत्रण करने की उनमें क्षमता पैदा की जा सकती है।''* (वॉघ, 2009)। डा. रॉबर्ट वाटसन, ब्रिटेन के पर्यावरण, खाद्य और ग्रामीण मामलों के वैज्ञानिक सलाहकार हैं और विवदास्पद 'आई ए ए एस टी डी रिपोर्ट' के सचिवालय के निदेशक हैं। उन्होंने कहा था कि *''पूरी दुनिया में जलवायु परिवर्तन और तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारण जो व्यापक भुखमरी फैली हुई है उसकी रोकथाम में जी एम फसलों की महती भूमिका है।''* इस रिपोर्ट को सरकार, मंत्रियों तथा अग्रण्य वैज्ञानिकों ने असाधारण समर्थन दिया है और यह ब्रिटेन की प्रतिष्ठित रॉयल सोसायटी द्वारा जारी अर्थपूर्ण रिपोर्ट में दिए गए विचारों से भी मेल खाती है, जिसका एक उद्धरण हम आगे परिच्छेद में दे रहे हैं। इस 'फूड 2030 रिपोर्ट' को जारी करते हुए, ऑक्सफोर्ड फार्मिंग कॉन्फ्रेंस में ब्रिटेन के प्रमुख वैज्ञानिक प्रो. जॉन बेडिंगटन ने कहा था, *''जी एम और नैनोटैक्नोलोजी को आधुनिक कृषि का अंग बनाना चाहिए .... हमें अब और भी गहरी हरी हरित कांति की जरूरत है जो पर्यावरण संबंधी और अन्य प्रकारकों की सभी वाधाओं के पार करके ऐसी खाद्य श्रृंखला विकसित करे कि सक्षम ढंग से खाद्य उत्पादन बढ़ता ही चला जाए। इसके लिए अनेक विषयों से जुड़ी तकनीकें और प्रौद्योगिकियों की जरूरत पड़ेगी, जिनमें जैव प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग से लेकर नवीनतम क्षेत्र जैसे कि नैनोटैक्नोलोजी शामिल है'' (ग्रे, 20009)।*

- **द रॉयल सोसायटी, लंदन, ब्रिटेन** ने एक बड़ी अर्थपूर्ण रिपोर्ट अक्टूबर 2009 में प्रकाशित की थी, जिसका शीर्षक था– *''रीपिंग द बेनीफिट्स ऑफ साइंस एंड द सस्टेनेबल इंटेंसिफिकेशन ऑफ एग्रीकल्चर।''* यानी ''विज्ञान और कृषि का टिकाऊ सघनीकरणः लाभ बटोरना।'' रॉयल सोसायटी, ब्रिटेन की सबसे प्रतिष्ठित विज्ञान अकादमी है, जिसने इस रिपोर्ट में जी एम फसलों के लिए सरकारी सहायता उपलब्ध करने की सिफारिश करते हुए कहा कि तभी कृषि का टिकाऊ सघनीकरण किया जा सकेगा। रिपोर्ट में आगे कहा गया कि,' *''खाद्य सुरक्षा की चुनौती जितनी विराट है उसे देखते हुए किसी भी प्रौद्योगिकी की अवहेलना नहीं की जा सकती और अलग–अलग क्षेत्रों तथा अलग–अलग परिस्थितियों में भिन्न–भिन्न रणनीतियां अपनानी होंगी।''* ब्रिटिश सरकार के चीफ साइंटिस्ट डॉ. जॉन बेडिंगटन ने ब्रिटेन में बायोटैक फसलें अपनाने पर बल दिया है। साथ ही ब्रिटेन 'फूड स्टैंडर्ड्स एजेंसी (एफ एस ए) जी एम फसलों के बारे में उनकी राय जानने के लिए उपभोक्ताओं के साथ संवाद का एक कार्यक्रम शुरू कर रही है। सन् 2004 में ब्रिटेन की सरकार ने बायोटैक फसलों पर अपनी नीति की घोषणा की, जिसमें कहा गया था कि ब्रिटेन में जी एम फसलों की खेती पर पूरी तरह पाबंदी लगाने का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। लेकिन जी एम की जरूरत को, हर प्रस्ताव को अलग से मामले–दर–मामले के क्रम में जांच कर फैसला करना होगा।'' (हिल्स, 2009)।

- **पोंटिफिकल कौंसिल फॉर जस्टिस एंड पीसः** पोप की न्याय और शांति परिषदों ने अफ्रीका में भूख और गरीबी के उन्मूलन के लिए जैव प्रौद्योगिकी अपनाने की सलाह देते हुए एक रिपोर्ट जारी की थी। 24 सितंबर 2009 में रोम में 'अफ्रीका में हरितक्रांति' पर एक चर्चा आयोजित की गई थी, जिसमें इस 'पोंटिफिकल कौंसिल फॉर जस्टिस एंड पीस' के पूर्व सेक्रेटरी आर्कबिशप गिआम्पालो क्रेपाल्डी ने कहा था कि *''अफ्रीका में भूख और पिछड़ेपन का कारण यह है कि वहां अधिकतर गयी–गुजरी और दकियानूसी कृषि विधियां अपनाई जा रही हैं। अतः यह आवश्यक है कि अफ्रीकी किसानों को नई प्रौद्योगिकी उपलब्ध कराई जाए, जो उनका भरण–पोषण कर सके। इसमें ऐसे बीज भी शामिल किए जाएं, जिन्हें उनकी आनुवंशिक रचना में सुधार करके उन्नत बनाया गया है।''* इस विचारगोष्ठी का प्रायोजन पोंटिफिकल रेगिना अपोस्टोलोरम यूनिवर्सिटी ने किया था, जिसके बायोईथिक्स के प्रो. फादर गोंजालो मिरांडा ने कहा था कि, *''यदि आंकड़े यह जाहिर करते हैं कि बायोटैक्नोलोजी अफ्रीका के विकास में बहुत योग दे सकती है तो हमारा यह भौतिक दायित्व है कि हम इन देशों को अपने स्तर पर प्रयोग करने के मौके दें।''* (अफ्रीकन फोरम ऑन बायोटैक्नोलोजी, 2009)।

3. क्या देशों, किसानों और क्षेत्र के अनुसार बायोटैक फसलों को अपनाने की वैश्विक दर सन् 2015 तक दुगुनी हो जाएगी और क्या प्राथमिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उचित बायोटैक फसलों का विस्तार किया जा सकेगा?

सन् 2009 में बायोटैक फसलों को अपनाने में जो शानदार तरक्की हासिल की गई है, उसे देखते हुए और अब से 2015 तक की भावी संभावनाओं पर दृष्टिपात करते हुए इस बारे में एक सतर्क आशावाद पनप रहा है कि सन् 2005 में आईएसएएए ने जो पूर्वानुमान जारी किया था कि बायोटैक रेशों, बायोटैक फसलें उगानेवाले किसानों और बायोटैक फसलों का क्षेत्र 2006 से 2015 के दौरान दुगना हो जाएगा, वह साकार हो सकता है। (यानी बायोटैक देश 20 से 40 मिलियन बायोटैक कृषक 10 मिलियन से 20 मिलियन और बायोटैक क्षेत्र 100 मिलियन से दूना बढ़कर 200 मिलियन हैक्टर होने के पूरे आसार हैं)।

इस आशावाद के अनेक कारण हैं। पहला तो यह कि 2010 और 2015 के बीच यह पूर्वानुमान है कि पहली बार बायोटैक फसलें अपनाने वाले देशों में 15 या इससे अधिक नए देश आ जुड़ेंगे। इस तरह 2015 तक विश्व में बायोटैक फसलें अपनाने वाले देशेां की संख्या 2005 के 'आईएसएएए' के पूर्वानुमान के अनुसार बढ़कर 2015 में 40 हो जाएगी। इन नए देशों में से तीन या चार तो एशिया के हो सकते हैं, तीन से चार तक पूर्वी और दक्षिणी अफ्रीका के हो सकते हैं, तीन–चार पश्चिम अफ्रीका के हो सकते हैं और एक–दो उत्तरी अफ्रीका और मध्य पूर्व के हो सकते हैं। लैटिन अमरीका और मध्य अमरीका तथा कैरीबियन में पहले ही दस देश बायोटैक फसलों का व्यापारीकरण कर चुके हैं और अब वहां आगे और देशों में बायोटैक फसलों के प्रसार की गुंजाइश नहीं दिखती। फिर भी हो सकता है कि इस क्षेत्र के दो या तीन देश 2015 तक पहली बार बायोटैक फसलें अपनाने के लिए आगे आ जाएं। पूर्वी यूरोप में दस नए बायोटैक देश पनप सकते हैं, जिनमें रूस भी शामिल हो सकता है। रूस में बायोटैक आलू के विकास का काम काफी आगे बढ़ चुका है। पूर्वी यूरोप के अनेक देशों में बायोटैक आलू अपनाने की संभावना है। पश्चिमी यूरोप में बायोटैक फसलों के प्रवेश के बारे में कुछ भी कह पाना मुश्किल है, क्योंकि वहां इसका फैसला विज्ञान और प्रौद्योगिकी के आधार पर नहीं, बल्कि राजनीतिक और विविध वादों–विवादों पर टिका है, जिसमें अनेक आंदोलनकारी संगठन शामिल हैं।

दूसरे जहां तक बायोटैक कृषकों की बात है 2015 तक 20 मिलियन किसान हो जाने का जो पूर्वानुमान जारी किया गया है, हो सकता है कि किसानों की संख्या इससे ज्यादा बढ़ जाए। सन् 2009 में 14 मिलियन किसान बायोटैक फसलों वाले पहले ही हो चुके हैं। किसानों की संख्या में बढ़त के आसार इसलिए अधिक हैं, क्योंकि इस बारे में अनेक अच्छे संकेत मिल रहे हैं। जैसे कि अलग दो–तीन वर्ष में चीन में बायोटैक धान की खेती शुरू होने वाली है। अकेले चीन में धान की खेती में 110 मिलियन कृषक परिवार शामिल हैं। साथ ही वहां बायोटैक मक्का की खेती भी शुरू हो सकती है और बायौटैक मक्का उगाने वाले भी चीन में 100 मिलियन परिवार हैं। इसकी भी पूरी संभावना है कि विश्व को इन सबसे महत्वपूर्ण मानव–आहार और पशु–आहार वाली फसलों की बायोटैक किस्में चीन की देखा–देखी अन्य एशियाई देश भी अपना सकते हैं। भारत में बी टी कपास की खेती और ज्यादा क्षेत्र में बढ़ने के आसार हैं और भारत में बी टी बेंगन की खेती शुरू होने के बाद फिलिपींस और बांग्लादेश भी बी टी बैंगन अपना लेंगे। ब्राजील में बायोटैक सोयाबीन, बायोटैक मक्का और बायोटैक कपास का क्षेत्र और भी ज्यादा बढ़ने के आसार हैं। अफ्रीका में बर्किना फासो में बी टी कपास और ईजिप्ट में बी टी मक्का के क्षेत्र में विस्तार होने के साथ–साथ अन्य अफ्रीकी देश भी बायोटैक फसलें अपना सकते हैं। यह भी आशा है कि 2015 से पहले ही गोल्डन राइस फिलीपींस और बांग्लादेश अपनाएंगे और उसके बाद भारत भी अपनाएगा और इंडोनेशिया तथा वियतनाम भी। पाकिस्तान जैसे छोटे और साधनहीन किसानों वाले और भी कई देश बायोटैक फसलें अपना सकते हैं और इस तरह 2015 तक 20 मिलियन या अधिक किसान बायोटैक कृषक बन सकते हैं।

तीसरे, जिस तरह बायोटैक फसलों ने खाद्य, पशु आहार और रेशे वाली फसलों में पूरी दुनिया में अधिक पैदावार और उच्च गुणवत्ता के प्रदर्शन कर दिए हैं, और इन फसलों की सुरक्षित आपूर्ति सुनिश्चित कर दी है, उसे देखते हुए इसमें कोई संदेह नहीं है कि 2015 तक बायोटैक फसलों का क्षेत्र 200 मिलियन हैक्टर तक बढ़ जाएगा। सबसे अधिक क्षेत्र वाली चार बड़ी बायोटैक फसलों– मक्का, सोयाबीन, कपास और कनोला को और भी अधिक क्षेत्र में अपनाए जाने की काफी गुंजाइश है। इसके साथ ही नई बायोटैक फसलें और नाए विशेषकों और कई विशेषकों वाली फसलों का क्षेत्र भी बढ़ेगा, जैसे कि बी टी धान, गोल्डन राइस, बायोटैक गन्ना और बायोटैक आलू। इन फसलों की खेती 2015 से पहले ही शुरू हो जाएगी। सन् 2009 में चार बड़ी बायोटैक फसलों ने ही 134 मिलियन हैक्टर क्षेत्र घेरा हुआ था और संभावित बायोटैक क्षेत्र 312 मिलियन हैक्टर है। इस तरह अभी 175 मिलियन हैक्टर में बायोटैक फसलों की खेती अपनाए जाने की गुंजाइश है, जो कि काफी बड़ा संभावित क्षेत्र है। अगर केवल एक फसल मक्का का ही उदाहरण लें, तो 158 मिलियन हैक्टर में दुनिया में मक्का की खेती की जा रही है और अभी तक इसके बहुत छोटे हिस्से में ही बायोटैक मक्का का प्रवेश हो पाया है, जो कि एक चौथाई क्षेत्र के करीब है। इस तरह अभी बायोटैक मक्का तीन चौथाई यानी 120 मिलियन हैक्टर में पैर पसार सकती है। अमरीका में दुनिया की सबसे अधिक मक्का उगाई जाती है और वहां 35 मिलियन हैक्टर मक्का क्षेत्र के 85 प्रतिशत में बायोटैक मक्का उगाई

जा रही है। दूसरे नंबर पर चीन में सबसे ज्यादा मक्का उगाई जाती है, जहां पहले ही बायोटैक मक्का को स्वीकृति मिल चुकी है। वहां फाइटेज मक्का और बायोटैक मक्का की अन्य गुणों वाली किस्मों का संभावित क्षेत्र 30 मिलियन हैक्टर है। मक्का उगाने वाला तीसरा सबसे बड़ा देश है ब्राजील, जहां मक्का के 13 मिलियन हैक्टर में से 2009 में 5 मिलियन हैक्टर में बायोटैक मक्का की खेती हो रही थी। जबकि अभी वहां बायोटैक मक्का अपनाने का यह दूसरा ही सीजन है। 2010 में ही ब्राजील में बायोटैक मक्का का क्षेत्र काफी बढ़ जाने की उम्मीद है। इसके बाद मक्का की खेती में चौथे नंबर पर है भारत (8 मिलियन हैक्टर) और फिर पांचवे नंबर पर मैक्सिको (7 मिलियन हैक्टर)। इन दोनों देशों में 2009 में बायोटैक मक्का के फील्ड ट्रायल शुरू किए जा चुके थे, क्योंकि उनके लाभों का मूल्यांकन करना था, जो कि सार्थक ही सिद्ध होंगे। एशिया में सामान्य तौर पर केवल फिलीपींस में बायोटैक मक्का बोई जाती है, केवल 5 लाख हैक्टर में, जबकि एशिया में मक्का का कुल क्षेत्र 500 लाख हैक्टर है। इसी प्रकार अफ्रीका में केवल दक्षिण अफ्रीका और ईजिप्ट में बी टी मक्का बोई जाती है, जो कि मक्का के कुल 280 लाख हैक्टर में से अभी 20 लाख हैक्टर में ही बोई जा रही है। दक्षिण अमरीका यों तो बायोटैक फसलों को उच्च स्तर पर अपनाए हुए है, लेकिन बायोटैक मक्का का लाभ वहां भी फिलहाल 200 लाख हैक्टर मक्का क्षेत्र में से केवल 70 लाख हैक्टर में उठाया जा रहा है। विश्व स्तर पर मक्का की इस समीक्षा से वर्तमान विशेषकों के उपयोग की दृष्टि से यही स्पष्ट होता है कि बायोटैक मक्का को लघुकालिक, मध्यकालिक तथा दीर्घकालिक स्तर पर अपनाए जाने की अपार संभावनाएं हैं।

बायोटैक फसलों को विश्व स्तर पर अपनाए जाने में बायोटैक धान की सूखा–सह किस्में उत्प्रेरक रूप में निश्चय ही निर्णायक भूमिका निभा सकती हैं। पहली पीढ़ी की बायोटैक फसलों में उपज में सार्थक वृद्धि प्राप्त करने में कीटव्याधियों, खरपतवारों और रोगों से धान की रक्षा का विशेष योगदान रहा। लेकिन दूसरी पीढ़ी की बायोटैक धान की किस्में प्रति हैक्टर उपज बढ़ाकर किसानों को अतिरिक्त प्रोत्साहन प्रदान करेंगीं। 'आर रेडी 2 यील्ड' सोयाबीन 2009 में जारी की गई और यह दूसरी पीढ़ी की ऐसी कई बायोटैक फसलों में ऐसी पहली फसल थी, जो सीधे उपज बढ़ाएगी। साथ ही गुणवत्ता के विशेषक भी बायोटैक फसलों में निविष्ट किए गए हैं और इस तरह की 'गोल्डन राइस', 'ओमेगा–3 सोयाबीन,' 'हाई लाइसिन मक्का' जैसी पोषक किस्में शीघ्र ही किसानों तक पहुंचेंगीं। इनके साथ ही कृषि आदान से जुड़े विशेषक भी आ जाएंगे और एक समृद्ध संमिश्र उपलब्ध होगा। अनेक नए विशेषक और उनके संयोजन तथा नई बायोटैक फसलें एकल तथा पुंजित विशेषकों वाली आने वाली हैं। ये शस्यात्मक तथा गुणवत्तात्मक दोनों तरह के गुणों से संपन्न होकर लघु, मध्यम तथा बड़े स्तर पर उगाई जा सकती है। निकट भविष्य में आने वाली कुछ नई बायोटैक फसलों और नए विशेषकों में से मुख्य चुनींदा उत्पादों के बारे में हम आगे के परिच्छेदों में जानकारी प्रस्तुत कर रहे हैं:

चीन ने बायोटैक धान और मक्का को स्वीकृति प्रदान की

नवंबर 2009 में चीन ने मुख्य बायोटैक फसलों की तिकड़ी को स्वीकृति प्रदान करने की प्रकिया पूरी की। ये हैं रेशेवाली फसल बी टी कपास जिसे 1997 में ही स्वीकृति दे दी गई थी और उगाई जा रही है; पशु आहार वाली फसल, फाइटेज मक्का और खाद्य फसल, बी टी धान। 2008 में हमने 'आईएसएएए' संक्षेप में यह प्राकलन व्यक्त किया था कि **''बायोटैक फसलें अपनाने की एक नई लहर उठेगी जो अपनी लपेट में पहली लहर में अपनाई गई फसलों को साथ लेकर विश्व स्तर पर बायोटैक फसलों के प्रसार को अधिक विस्तृत फलक प्रदान करेंगीं।** जब 27 नवंबर 2009 को चीन के कृषि मंत्राालय ने तीन बायोसेफ्टी प्रमाण पत्र जारी किए तो मानो हमारी भविष्यवाणी पर मुहर लगा दी (क्रोप बायोटैक अपडेट, 2009)। इनमें से दो प्रमाण पत्र बायोटैक धान को, एक प्रमाण पत्र राइस रिस्टोरर लाइन (बीटी हुआहुई–1) को तथा एक अन्य प्रमाण पत्र संकर धान वंशक्रम (बीटी शान्यू शान्यू–63) को प्रदान किया गया। इन दोनों में *cry1Ab/ cry1Ac* जीन यानी वंशाणु व्यक्त किए गए और इनका विकास 'हुआझोंग एग्रीकल्चुरल यूनिवर्सिटी' में किया गया। बी टी धान को स्वीकृति देना कितना भारी महत्व रखता है, इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि धान सबसे महत्वपूर्ण खाद्य फसल है जो विश्व की आधी मानवता का पेट भरती है और गरीबों की भी सबसे चहेती खाद्य फसल है। तीसरा प्रमाण पत्र बायोटैक फाइटेज मक्का को प्रदान किया गया जो फिर से दुनिया की अत्यंत लोकप्रिय तथा प्रचलित फसल है और पशु आहार में इसका पूरी दुनिया में सबसे अधिक इस्तेमाल होता है। फाइटेज मक्का का विकास चीन की कृषि विज्ञान अकादमी ने किया है और 7 साल के परीक्षणों के बाद इसका लाइसेंस 'ओरीजिन एग्रीटैक लिमिटेड' को दिया गया है। ***स्वीकृति के ये तीन प्रमाण पत्र बायोटैक फसलों के क्षेत्र में चीन, एशिया और पूरी दुनिया के लिए बड़े ही गहरे नतीजे देने वाले हैं।*** यहां यह ध्यान देने योग्य है कि चीन के कृषि मंत्रालय ने ये तीनों प्रमाण पत्र बड़ी गहरी जांच के बाद ही जारी किए हैं और इनका पूरी तरह से व्यापारीकरण अगले 2–3 सालां में चीन में शुरू हो जाएगा। अभी इन फसलों के ''स्टैंडर्ड रजिस्ट्रेशन ट्राइल' होने हैं, जो बायोटैक फसलें हों या गैरबायोटैक, दोनों के लिए लाजिमी हैं। यह उल्लेखनीय है कि चीन ने मुख्य फसलों की इस तिकड़ी को सही क्रम में स्वीकृति प्रदान की है– पहली फसल जिसे स्वीकृति दी गई वह थी 'फाइबर' की (बी टी कपास) और उसके बाद 'फीड' की फाइटेज मक्का और फिर 'फूड' की बी टी धान। इन तीनों फसलों का चीन को कितना भारी फायदा होगा इसकी एक बानगी आप नीचे पढ़ सकते हैं।

''व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009''

- **बी टी कपासः** चीन ने सन् 1997 से ही बी टी कपास को सफलतापूर्वक उगाना शुरू कर दिया था और अब चीन के 70 लाख छोटे किसानों ने इसका फायदा लगभग 220 डालर प्रति हैक्टर की दर से उठाना शुरू कर दिया है। एक वर्ष में किसानों की यह आमदनी राष्ट्रीय स्तर पर लगभग एक अरब अमरीकी डालर बैठती है। इससे कपास की पैदावार में 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई है और कीटनाशियों के छिड़काव में 60 प्रतिशत की कमी हुई है। ये दोनों अधिक टिकाऊ खेती में योग देते हैं और गरीब किसानों को समृद्ध बनाते हैं। चीन विश्व में सबसे अधिक कपास पैदा करता है और वहां कपास के कुल 54 लाख हैक्टर क्षेत्र में से 68 प्रतिशत क्षेत्र में बी टी कपास की सफल खेती हो रही है।

- **बी टी धानः** चीन में बी टी धान की उपज में औसतन 8 प्रतिशत की वृद्धि होगी और कीटनाशियों के छिड़काव में 80 प्रतिशत तक की कटौती की जा सकेगी, जिससे हर साल चीनी किसानों को 4 अरब अमरीकी डालर की आमदनी होगी। चावल चीन का मुख्य आहार है और इसकी वहां 300 लाख हैक्टर में खेती की जाती है (हुआंग इत्यादि 2005)। यह हिसाब लगाया गया है कि चीन में बोए जाने वाली धान की फसल के 75 प्रतिशत हिस्से में धानबेधक कीट हमला बोलता है, जो बी टी धान में नहीं लगता। चीन दुनिया में सबसे ज्यादा धान पैदा करता है, जिसकी मात्रा 1780 लाख टन है। इसकी खेती में 1100 लाख किसान परिवार लगे हैं और यदि एक परिवार में चार सदस्य भी मान लें तो बी टी धान से 4400 चीनी किसानों को फायदा होने वाला है। इन किसानों को तो प्रत्यक्ष लाभ पहुंचेगा, लेकिन चीन की 130 करोड़ जनसंख्या को उपभोक्ताओं के रूप में अप्रत्यक्ष लाभ पहुंचेगा। चीन में सूखे की समस्या है, लवणीयता भी बढ़ रही है और धान की फसलपर कीटव्याधियां भी बहुत लगती हैं। ऊपर से जलवायु परिवर्तन की और भूजल का स्तर घटते जाने की भी चुनौतियां हैं। चीन को नई प्रौद्योगिकी की जरूरत है, ताकि वह खाद्य उत्पादन में आत्म निर्भरता को टिकाए रख सके और पैदावार को लगातार बढ़ाता रहे। इन सब समस्याओं का एक ही जवाब है– बी टी धान।

- **फाइटेज मक्काः** अमरीका के बाद चीन ही विश्व में सबसे अधिक मक्का पैदा करता है। वहां 10 करोड़ किसान परिवार तीन करोड़ हैक्टर भूमि में मक्का उगाते हैं। यह मक्का मुख्य रूप से पशु–आहार के रूप में काम आती है। चीन में समृद्धि आने के साथ ही मांसाहार का चलन बढ़ा है, अतः मक्का के उत्पादन में चीन आत्मनिर्भर बनने के प्रयास में लगा है। विश्व में सबसे अधिक सूअर चीन में ही हैं, जो कि 1968 में 50 लाख थे, और अब 100 गुने बढ़कर 5000 लाख से अधिक हो गए हैं। फाइटेज मक्का दाने के रूप में चीन के सुअरों को खिलाई जाएगी तो वे फॉस्फोरस को आसानी से पचा सकेंगे और तेजी से अधिक मोटे हो सकेंगे और मांस–उत्पादन बढ़ेगा। फाइटेज मक्का, पशु छीजन में कम फॉस्फेट छोड़कर मिट्टी, पानी और भूजल के स्रोतों में फॉस्फेट का प्रदूषण भी कम करेगी। मक्का चीन की विशाल पक्षी–संख्या को खिलाने के लिए भी इस्तेमाल की जाती है। वहां 13 अरब मुर्गे, मुर्गी और बतख पाले जा रहे हैं। सन् 1968 में इनकी संख्या 123 लाख थी और अब 1300 लाख है। फाइटेज मक्का उगाने के बाद चीन को इन पक्षियों के दाने में मिलाने के लिए फाइटेज खरीदना नहीं पड़ेगा और उपकरण श्रम, समय तथा धन की बचत होगी। अमरीका में 350 लाख हैक्टर में मक्का उगाई जाती है और वह विश्व में मक्का का सबसे बड़ा उत्पादक है। चीन का मक्का उत्पादन में विश्व में दूसरा स्थान है और वहां 300 लाख हैक्टर में मक्का की खेती की जाती है। आमदनी बढ़ने के साथ ही चीनी आबादी ने मांसाहार खासतौर से पोर्क की खपत बढ़ा दी है और मक्का पशु आहार का सबसे बड़ा स्रोत है, अतः चीन को मक्का की पैदावार बढ़ानी ही होगी। चीन हर साल 50 लाख टन मक्का आयात करता है और उस पर खासी बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा खर्च करता है, जोकि 100 करोड़ डालर प्रति वर्ष से अधिक पड़ती है। फाइटेज मक्का चीन का प्रथम स्वीकृत बायोटैक पशु–आहार है। एशिया में बायोटैक मक्का उगाने वाला पहला देश फिलिपींस हैं, जहां सन् 2003 से फाइटेज मक्का उगाई जा रही है। सन् 2009 में फिलिपींस में बी टी मक्का, खरपात–सह (एच टी) मक्का और पुंजित बी टी/ एच टी मक्का लगभग 5 लाख हैक्टर में उगाई जा रही थी।

चीन में बी टी कपास, बी टी धान और फाइटेज मक्का वहां के राष्ट्रीय संस्थानों में ही विकसित की गईं और चीन का उन पर स्वामित्व हैं। जिस तरह इन बायोटैक फसलों से चीन को फायदा होने वाला है, वैसा ही एशिया के अन्य देशों को भी खासतौर से, और कुल मिलाकर दुनिया के दूसरे देशों में से जो भी इन बायोटैक फसलों को अपनाएंगे, उन्हें भी फायदा पहुंचेगा। इन सभी विकासशील देशों में कृषि उत्पादन बढ़ाने में वैसी ही चुनौतियां हैं, जैसी चीन में हैं। दुनिया में 1500 लाख हैक्टर में धान की खेती होती है और जितना चावल दुनिया में पैदा किया जाता है, उसका 90 प्रतिशत एशिया में ही खप जाता है। बी टी धान का सबसे ज्यादा फायदा एशियाई देशों को ही पहुंचेगा। विश्व में धान की खेती में 2500 लाख के करीब छोटी जोत वाले साधनहीन किसान परिवार जुटे हैं और बी टी धान उगाने से उन्हें अधिक पैदावार मिलेगी और दुनिया की कुल गरीब आबादी की इस आधी जनसंख्या की गरीबी दूर होगी। अगर एक परिवार में चार सदस्य भी मान लें, तो लगभग 100 करोड़ गरीब किसानों को बी टी धान के सहारे गरीबी से उबरने का मौका मिलेगा– वह भी प्रत्यक्ष रूप से। इसी प्रकार मक्का भी एशिया में 500 लाख हैक्टर में उगाई जाती है। इसकी उत्पादकता भी बायोटैक मक्का से बढ़ेगी। 1000 लाख गरीब साधनहीन परिवार चीन में मक्का की खेती करते हैं और इस तरह वहां 4000 लाख करीब लोगों को बी टी मक्का से फायदा पहुंचेगा। जिस तरह चीन ने बायोटैक धान और बायोटैक मक्का की खेती शुरू करने की पहल करके अपना नेतृत्व प्रदर्शित किया है, उसका एशिया के अन्य देशों में भी खाद्य और पशु–आहार वाली बायोटैक फसलो की स्वीकृति

और उन्हें अपनाने की दर में तेजी लाने का सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। यही नहीं विश्व में सभी देशों, खासतौर से विकासशील देशों, में इसकी सकारात्मक प्रतिक्रिया होगी। स्वयं चीन को विश्व की सबसे महत्वपूर्ण खाद्य फसल धान और सबसे महत्वपूर्ण पशु–आहार मक्का की बायोटैक किस्मों को अपनाने से इन दोनों फसलों की उत्पादकता बढ़ाने और इनके उत्पादन में आत्म निर्भरता प्राप्त करने में मदद मिलेगी। खासतौर से एशिया के देशों के लिए चीन इस मामले मे उनका आदर्श बन सकता है, जिसके विश्व में निम्नलिखित ठोस परिणाम निकल सकते हैंः

- विकासशील देशों में बायोटैक फसलो को समय रहते स्वीकृति देने की सक्षम प्रक्रिया विकसित होगी।
- दक्षिणी दुनिया के बीच आपस में सहयोग का और निजी तथा सरकारी गठबंधन तथा भागीदारी का एक नया युग शुरू होगा, जिसमें पी पी पी यानी पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप काफी हद तक बढ़ेगा।
- चावल के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में घट–बढ़ कम होगी और सन् 2008 में जिस तरह महंगाई ने गरीबों को कष्ट पहुंचाया, वैसी घटनाएं कम होंगीं और चावल की कीमतें स्थिर रहने में मदद मिलेगी।
- विकासशील देशों में खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए अधिक उत्तरदायित्व पूर्ण ठोस कदम तेजी से उठाए जाएंगे और उन्हें इसके लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अधिक प्रोत्साहन मिलेगा, ताकि वे संयुक्तराष्ट्र के सहस्राब्दी लक्ष्यों को पूरा करने में अपना भरपूर योगदान दे सकें।

अंत में, बी टी धान और फाइटेज मक्का को अनेक शस्यात्मक गुणों तथा उच्च गुणवत्ता वाली बायोटैक फसलों की झड़ी लगने की शुरूआत के रूप में देखना चाहिए, क्योंकि अभी तो अनेक गुणों वाली अलग–अलग फसलें और एक ही फसल में अनेक गुणों वाली फसलें विश्व के कृषि पटल पर प्रकट होने के लिए कतार में खड़ी है। इनमें उपज अधिक बढ़ाने के गुण के साथ ही उच्च गुणवत्ता होने से खाद्य, पशु–आहार और रेशे की मात्रा दुगनी–तिगुनी पैदा करने की क्षमता होगी। सन् 2050 तक इन बायोटैक फसलों के कारण पानी, जीवाश्मी ईंधन और नाइट्रोजन की काफी बचत होगी और कम लागत से ही अधिक फसलें पैदा होने लगेंगीं। विश्व की प्रमुख खाद्य फसल बी टी चावल की चीन में जो स्वीकृति दी गई हैं, वह विश्व स्तर पर उत्प्रेरक का काम करेगी और निजी तथा सरकारी संस्थाओं के बीच सहभागिता बढ़ने से 'सबको भोजन और खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता' का तथा न्याय और समतापूर्ण समाज के निर्माण का एक नया युग शुरू होगा, जिसमें भूख से मुक्त विश्व के निर्माण का महान लक्ष्य प्राप्त करने की दिशा में ठोस कदम उठाए जाएंगे। चीन ने जिस तरह से बायोटैक धान और बायोटैक मक्का के व्यवसायीकरण के लिए प्रमाण पत्र जारी किए हैं, उससे यह स्पष्ट होता है कि चीन की कथनी और करनी में अंतर नहीं है, इसे साबित करने की उसकी यह कोशिश सफल रही है। चीन ने अपने यहां ही विकसित खाद्य, पशु–आहार तथा रेशे वाली फसलों को तेजी से अपनाने में अपनी नेतृत्व प्रदान करने की कुशलता का भी परिचय दिया है और वहां इससे पहले सन् 2006–2007 से ही बायोटैक पपीता भी उगाया जा रहा है। इस तरह चीन ने बायोटैक फसलों से आर्थिक तथा पर्यावरणगत लाभ प्राप्त करने की मुहिम तेज करके अपनी उस रणनीति को अंजाम दिया है, जिसमें वह खाद्य, पशु आहार तथा रेशे वाली फसलों में आत्मनिर्भरता प्राप्त करके किसी और का मुंह जोहना नहीं चाहता, जो उसके लिए अन्यथा भी बहुत महत्व रखता है।

स्मार्टस्टैक्स™

जुलाई 2009 में बायोटैक मक्का की एक नई किस्म स्मार्टस्टैक्स™ को अमरीका की पर्यावरण–रक्षा एजेंसी– 'ई पी ए' ने पंजीकृति किया और कनाडा की फूड इंसपेक्शन एजेंसी–'सीएफआईए' ने नियामक तौर पर प्राधिकृत किया (पीआरन्यूजवायर, 2009)। बायोटैक मक्का की इस नई किस्म का विकास, मोंसांटो कंपनी और 'डो एग्रेसाइंसेज' के बीच अनुसंधान और विकास और एक–दूसरे में लाइसेंसों की अदला–बदली के करारनामे का नतीजा है, जो सन् 2007 में किया गया था। स्मार्टस्टैक्स™ बायोटैक मक्का में 8 वंशाणु निविष्ट किए गए हैं और यह अब तक विकसित की गई बायोटैक किस्मों में सर्वश्रेष्ठ पुंजित बायोटैक फसल है, जिसे स्वीकृति मिल चुकी है। इससे मक्का में कीटव्याधियों का खतरा बिल्कुल टल जाएगा और न तो फसल के ऊपर लगने वाली कीटव्याधियां इस बायोटैक मक्का को कोई हानि पहुंचा सकेंगीं और न फसल के नीचे मिट्टी में पाए जाने वाले नाशीजीव इसे कोई नुकसान पहुंचा सकेंगे। इसके साथ ही इसमें खरपतवारों को नष्ट करने वाले रसायन के प्रति भी रोधिता है, ताकि दवा छिड़कने पर सिर्फ खरपतवार ही नष्ट हों और मक्का की फसल को कोई नुकसान न पहुंचे।

स्मार्टस्टैक्स™ को विकसित करने में निम्नलिखित चार ईवेंटों का चौमुखी पुंजित किस्में विकसित करने में उपयोग किया गया हैः एम ओ एन 89034 x टी सी–1507 x एम ओ एन– 88017 x डी ए एस–59122–7।

- एम ओ एन–89034 दो पूरक प्रोटीनों–Cry2Ab और Cry1A.105 को व्यक्त करके लेपीडोप्टेरा वंश के हानिकारक कीटों का नियंत्रण करता है।
- टी सी–1507 लेपीडोप्टेरा कीटों के नियंत्रण के लिए Cry1F और ग्लूफोसाइनेट–सह्यता के लिए 'बी ए आर' को व्यक्त करता है।
- एम ओ एन–88017 Cry3Bb1 को मक्का के जड़कृमि (रूटवर्म) के नियंत्रण के लिए और ग्लाइफोसेट–सह्यता के लिए 'पी पी–4' को व्यक्त करता है।
- डी ए एस–59122–7 दुहरे प्रोटीन Cry34/35Ab1 को मक्का के जड़कृमि के नियंत्रण के लिए और बी ए आर को ग्लूफोसाइनेट–सह्यता के लिए व्यक्त करता है।

इस प्रकार कुल मिलाकर 8 वंशाणु 'जीन' इन तीन गुणों को कूटित करते हैंः जमीन के ऊपर कीट–नियंत्रण, जमीन के नीचे कीट नियंत्रण और खरपतवारनाशी सहयता। ये आठ वंशाणु इस प्रकार हैंः *(cry2Ab, cry1A.105, cry1F, cry3Bb1, cry34, cry35Ab1, cp4,* और *bar)* पाठकों की सुविधा के लिए निम्नलिखित परिच्छेद में 'स्मार्टस्टैक्स, के विकास में प्रयुक्त व्यापारिक उत्पादों का विवरण दिया जा रहा हैः

- 'डो एग्रो साइंसेज' की कीटव्याधि–नियंत्रण प्रौद्योगिकी 'हरक्यूलेक्स, से **जमीन के ऊपर मक्का की फसल को नुकसान पहुंचाने वाली** कीटव्याधियों के नियंत्रण का गुण निविष्ट किया गया। ये कीटव्याधियां हैंः मक्का की बाली का कृमि (ईयरवर्म), यूरोपियन मक्का बेधक (कोर्न बोरर), दक्षिण पश्चिम मक्का बोरर (साउथवेस्टर्न कोर्न बोरर), गन्ना बेधक (शुगरकेन बोरर), पश्चिमी फली कटुआ (वेस्टर्न बीन कटवर्म) और काला कटुआ (ब्लैक कटवर्म)। इसमें मोंसांटो के 'वी टी पी आर ओ' ने और दूसरी पीढ़ी के दो जीन वाले लेपीडोप्टेरा कीटों का नियंत्रण करने वाले उत्पाद 'जेन्युटी™ तथा 'ट्रिपिल प्रो™' का भी योग रहा।
- मोंसांटो की यील्डकार्ड बी टी रूटवर्म/ आर आर–2 प्रौद्योगिकी तथा 'डो एग्रो साइंसेज' की 'हरक्यूलेक्स® आर डब्ल्यू' कीट नियंत्रण प्रौद्योगिकी के एकीकरण से **जमीन के नीचे से हमला बोलने वाले कीटों का नियंत्रण'** ये कीटव्याधियां हैंः पश्चिमी, उत्तरी और मैक्सिकी मक्का जड़कृमि।
- मोंसांटो के खरपातनाशी–सह 'राउण्डअप रेडी®' 2 तथा बायर क्रोप साइंसेज के 'लिबर्टी लिंक' के संयोजन से विविध खरपतवारों और घासों का नियंत्रण करने की प्रौद्योगिकी। इससे मक्का की फसल पर कोई बुरा असर नहीं पड़ता।

इस बारे में प्रयोगों से प्रमाणित हो चुका है कि 'स्मार्टस्टैक्स™' मक्का पर तमाम तरह को कीटव्याधियों का कोई असर नहीं होता और अब तक की यह एकमात्र किस्म है, जो इतनी तरह की कीटव्याधियों से सुरक्षित रहती है। 'स्मार्टस्टैक्स™' में कीटव्याधियों के प्रति जो बहु–रोधिता निविष्ट की गई है, उससे यह खतरा भी टल गया है कि मक्का की इस फसल को उगाने से कीटों में इसके कीटनाशी वंशाणुओं का असर कुछ समय बाद कम या खत्म हो जाएगा और वे कीटरोधी बन जाएंगे और आगे चलकर मक्का की इस किस्म को भी अपना शिकार बना लेंगे। इस तरह इस बायोटैक मक्का की खेती करने पर हानिकारक कीटों को शरण देने वाली बेकार की खरपतवारों को खेतों के पास उगाने की जरूरत नहीं रहेगी। अमरीका में और कनाडा में इस बी टी मक्का की खेती को स्वीकृति प्रदान करने वाली एजेंसियों, ई पी ए और सी आई एफ ए ने व्यर्थ की कीटाश्रयी फसलें बोने में 20 से 5 प्रतिशत तक कटौती करने की आवश्यकता दर्ज की। अमरीका के कपास क्षेत्र में इन व्यर्थ की फसलों को कीटों के लिए छोड़ने में 50 से 20 प्रतिशत की कटौती दर्ज की गई। अगर 5 प्रतिशत व्यर्थ के खरपतवार और घासफूस कीटों के लिए छोड़ दिया जाए तो उससे वैसे भी पूरे फार्म की मक्का की पैदावार बढ़ जाती है। इस तरह किसानों को दुहरा फायदा होता है, एक तो फसल के कीटव्याधियों से कीटरोधी फसल होने के कारण और दूसरे, कीटाश्रयी व्यर्थ घासफूस की जरूरत में कमी के कारण।

जिस समय इस संक्षेप की पांडुलिपी तैयार की जा रही थी, उस समय अमरीका और कनाडा में स्मार्टस्टैक्स™' को सन् 2010 में 10 से 15 लाख हैक्टर से अधिक भूमि में खेती के लिए जारी करने का काम चल रहा था। साथ ही कुछ मुख्य मक्का–उत्पादक देशों में इस बायोटैक किस्म को आयात करने के लिए नियामक निकायों से स्वीकृति लेने की कार्रवाई शुरू कर दी गई थी, ताकि उत्तरी अमरीका में मक्का की बुआई के मौसम से पहले ही उन्हें इसकी व्यापारिक खेती की स्वीकृति मिल जाए।

भारत में बी टी बैंगन

बैंगन को भारत में सब्जियों का राजा माना जाता है। सब्जी के तौर पर भारत में बैंगन को बड़े चाव से खाया जाता है। चीन के बाद भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा बैंगन–उत्पादक देश है। कुल मिलाकर लगभग 14 लाख मुख्यतः छोटी जोत वाले और हाशिए पर के साधनहीन किसान भारत में बैंगन की खेती करते हैं, जो कि हर साल लगभग 5,50,000 हैक्टर में उगाई जाती है। पूरे साल ही बैंगन उगाया जाता है और इसे मंडी में बेचकर बैंगन–उत्पादकों को अच्छा खासा मुनाफा मिल जाता है। लेकिन बैंगन अनेक प्रकार के कीटों को भी पसंद है और इसलिए कीटव्याधियों और रोगों के कारण प्रायः बैंगन की 60 से 70 प्रतिशत फसल बर्बाद हो जाती है। इसलिए बैंगन पर काफी मात्रा में कीटनाशी दवाएं छिड़कनीं पड़ती हैं। भारत में बी टी बैंगन का विकास निजी और सरकारी संस्थाओं की भागीदारी से किया गया है। यह बैंगन के फलबेधक और तनाबेधक कीटों की रोकथाम करके रासायनिक कीटनाशियों के छिड़काव की 80 प्रतिशत तक बचत करता है। इस तरह वास्तविक रासायनिक दवा की 42 प्रतिशत तक बचत हो जाती है। ये कीटनाशी बैंगन की लगभग सभी कीटव्याधियों की रोकथाम के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं और बी टी बैंगन बोने पर इनकी ज्यादा जरूरत नहीं पड़ती। गैर बी टी किस्मों की बजाय बी टी बैंगन बोने से लगभग 33 प्रतिशत अधिक और संकर बैंगन से 45 प्रतिशत अधिक बैंगन मिल जाते हैं। इस तरह गैर बी टी बैंगन की तुलना में प्रति हैक्टर 1539 डालर का निवल लाभ मिल जाता है। यह लाभ बैंगन की राष्ट्रीय किस्म जिससे तुलना की जाती है, उसके मुकाबले 1895 डालर प्रति हैक्टर अधिक मिलता है। इसके अलावा कीटनाशी दवाओं की 115 डालर के करीब प्रति हैक्टर बचत होती है। अगर पूरे देश को वर्ष भर में होने वाले फायदे का राष्ट्रीय औसत निकाला जाए तो वह बी टी बैंगन बोने से 4110 लाख अमरीकी डालर के बराबर बैठता है। बी टी बैंगन की प्रौद्योगिकी को मोंसांटो ने बड़ी उदारता से स्थानीय बीज कंपनी 'माहिको' को दान कर दिया, जिन्होंने फिर अपनी प्रयोगशाला में बी टी बैंगन की किस्म विकसित की। यही उदारता फिलिपींस और बांग्लादेश में भी दिखाई गई। इन देशों के साधनहीन गरीब किसानों की माली

हालत सुधारने के लिए ही यह कदम उठाया गया और इन देशों में बैंगन की मुक्त परागित किस्मों में भी बी टी का वंशाणु डालने की स्वीकृति प्रदान की गई। इस समय भारत में बी टी बैंगन की 10 मुक्त परागित किस्में तथा बी टी बैंगन के 8 संकर व्यापारिक स्वीकृति की प्रतीक्षा में है।

सन् 2000 से अक्टूबर 2009 तक भारत की नियामक एजेंसियों ने बी टी बैंगन की बड़ी कड़ी जांच की है। इसके बाद ही भारत की जी ई ए सी (जेनेटिक इंजीनियरिंग एप्रूवल कमेटी) ने ऐतिहासिक निर्णय लेकर बी टी बैंगन की खेती करने की सिफारिश की। इस समय यह अंतिम स्वीकृति के लिए भारत सरकर के पास विचाराधीन है।

गोल्डन राइस

अनाज वाली फसलों में चावल सबसे अधिक ऊर्जा उपलब्ध कराता है, लेकिन उसमें आवश्यक एमीनो एसिडों और विटामिनों का अभाव है, जो कि मानव स्वास्थ्य के लिए बेहद जरूरी हैं। चावल में 'विटामिन–ए' बनाने वाला बीटा कैरोटिन नहीं होता, जिसकी आंखों के लिए और कोशिका–विभेदन के लिए आवश्यकता पड़ती है। जब स्तनधारी प्राणियों में भ्रूण का विकास हो रहा होता है तो प्रतिरोधी प्रणाली के लिए तथा शरीर की श्लेष्मिक झिल्लियों के लिए इन पोषक तत्वों की जरूरत पड़ती है। विकासशील विश्व में 'विटामिन–ए' की कमी से 12 करोड़ 70 लाख के लगभग व्यक्ति प्रभावित होते हैं और इनमें से स्कूल से पहले की उम्र के 25 प्रतिशत बच्चों पर इसका बुरा असर पड़ता है, खासतौर से आंखों पर। इस समय 250,000 से 500,000 इसी कारण हर वर्ष अंधे हो जाते हैं और उनमें से 67 प्रतिशत की महीने भर के अंदर ही मृत्यु हो जाती है। यानी प्रतिदिन 6000 शिशुओं की मौतें 'विटामिन–ए' की कमी के कारण होती हैं। साल भर में ये मृत्यु संख्या 22 लाख के करीब बैठती है। जब इस समस्या का समाधान मौजूद है, तो फिर इसे बर्दाश्त किए जाना नैतिक दृष्टि से अस्वीकार्य है। विकासशील देशों में एफ ए ओ 'विटामिन–ए' की गोलियां बच्चों को खिलाने के कार्यक्रम चला रहा है, लेकिन वह काफी महंगा पड़ता है। करीब 5000 लाख अमरीकी डालर प्रति वर्ष खर्चने पड़ते हैं। इसलिए यह कोई टिकाऊ समाधान नहीं है और यह सेवा दूर–दराज के दुर्गम इलाकों तक नहीं पहुंचाई जा सकती। दुनिया की लगभग आधी आबादी, यानी कोई 3 अरब व्यक्ति कैलोरी ऊर्जा के लिए चावल पर ही निर्भर हैं और उनमें से अधिकतर के बूते का यह नहीं कि वे 'विटामिन–ए' की गोलियां खरीद सकें या अन्य पूरक पोषक आहार खरीद सकें। 'विटामिन–ए' की इस व्यापक न्यूनता और उससे पैदा हुए दुष्प्रभावों को रोकने का सबसे सरल, सस्ता और कारगर उपाय है गोल्डन राइस, जो कि एक बायोटैक फसल है।

यह सन् 1984 की बात है, जब अंतर्राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान, मनीला, फिलिपींस में कार्यरत धान प्रजनक डा. पीटर जेनिंग्स के मन में यह विचार पनपा कि लोग मुख्य रूप से चावल पर निर्भर हैं, उनमें 'विटामिन–ए' की कमी दूर करने के लिए 'गोल्डन राइस' विकसित किया जाए। रॉकफलर फाउंडेशन ने लगातार 8 सालों तक इस प्रायोजना को लगभग 10 लाख डालर की वित्तीय सहायता से चलाया। प्रो. इंगो पोट्रीकस और डा. पीटर बेयर ने इस प्रायोजना का संचालन किया। उन्होंने धान में 'विटामिन–ए' को बनाने वाले बीटा कैरोटीन को कैसे पैदा किया जाए, इसका रासायनिक और आनुवंशिक पथ खोज निकाला और धान में जीनांतरण करके धान की ऐसी किस्म बना डाली, जो बीटा कैरोटिन पैदा करने लगी। इस प्रायोजना को निजी कंपनियों और सरकारी संस्थाओं की सहभागिता के आधार पर चलाया गया और इर्री के साथ जिन कंपनियों ने इस सहभागिता में भाग लिया वे थीं– बायर, मोजेन, मोंसांटो, नोवार्तिस और जेनेका। साथ ही एक अज्ञात जापानी कंपनी ने भी सहयोग दिया। इस प्रायोजना के शुरूआती दौर में इन कंपनियों ने उन सभी तकनीकों को दान करके वैज्ञानिकों को उपलब्ध करा दिया, जिनके लिए आमतौर पर उन्हें तगड़ी लाइसेंस फीस मिलती है। सन् 2000 में 'ताइपेई–309' नामक जेपोनिका धान में बीटा कैरोटिन बनाने वाला वंशाणु (जीन) डालकर 'गोल्डन राइस' विकसित कर लिया गया। इसके लिए डैफोडिल के दो ट्रांसजीन धान की इस किस्म में निविष्ट किए गए और एक वंशाणु एक जीवाणु से लिया गया। इस किस्म में बीटा कैरोटीन का अंश बहुत कम था– केवल 1.6 से 1.8 माइक्रोग्राम प्रति ग्राम, लेकिन कम से कम इससे यह तो पता चल गया कि ये वंशाणु धान में वांछनीय गुण को व्यक्त करते हैं। जीवाणु के जीन के साथ डैफोडिल के एक जीन के प्रमोटर में परिवर्तन करके सिनजेंटा कंपनी के वैज्ञानिकों ने जावानिका धान की कोकोड्रिई किस्म में बीटा कैरोटिन का अंश 6 से 8 माइक्रोग्राम प्रति ग्राम बढ़ा दिया। इसी वंशक्रम को 'गोल्डन राइस1' नाम दिया गया। इसको सिनजेंटा ने 2004 में 'गोल्डन राइस ह्यूमेनिटेरियन बोर्ड' को उदारतापूर्वक दान कर दिया। यह बोर्ड 'गोल्डन राइस' पर चल रहे अनुसंधान की निगरानी करता है और उसके लिए बनाए गए नेटवर्क में संबंधित वंशक्रमों को उपलब्ध कराता है। इस नेटवर्क में ये संस्थाएं शामिल हैं: इंटरनेशनल राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट और फिलिपींस राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट (फिलराइस) तो फिलिपींस में और वियतनाम में 'कूलोंग डेल्टा राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट, 'भारत में जैव प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली, धान अनुसंधान निदेशालय, हैदराबाद, तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयंबटूर, गोविंद बल्लभ कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली; दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चुरल साइंसेज, बंगालुरु; बांग्लादेश राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट, बांग्लादेश; यन्नान एकेडेमी ऑफ एग्रीकल्चुरल रिसर्च एंड डेवलपमेंट, इंडोनेशिया और अल्वर्ट–लुडविग्स यूनिवर्सिटी, फ्रीबर्ग, जर्मनी। (देखें http://www.goldenrice.org)।

सन् 2005 में सिंजेंटा ने 'गोल्डन राइस–2' का विकास किया और इसके लिए जावानिका धान की केबॉनेट किस्म का इस्तेमाल किया। इमें मक्का और जीवाणुओं के ट्रांसजीन निविष्ट किए गए। इस किस्म ने 'गोल्डन राइस–1' की तुलना में उससे चौगुने

से अधिक बीटा कैरोटिन पैदा किया जो कि प्रति ग्राम 36.7 माइक्रोग्राम था। 'गोल्डन राइस–2' भी सिजेंटा ने 'हॅयूमेनिटेरियन बोर्ड' को ही दान कर दिया। सन् 2005 में बिल और मेलिंदा गेट्स फाउंडेशन ने अल्बर्ट लुडविग्स यूनिवर्सिटो फ्रीबर्ग, जर्मनी के डा. पीटर बेयर को एक सहभागी प्रायोजना के लिए फंड उपलब्ध किए। यह प्रायोजना थी, 'उच्च बीटा–कैरोटीन, विटामिन–ई, प्रोटीन, आयरन और जिंक की जैव–उपलब्धता बढ़ाने के लिए धान में जीनियागरी'। इसमें अन्य सहभागी थे, फिलराइस, इर्री, मिशीगन स्टेट यूनिवर्सिटी, बेलोर कॉलेज ऑफ मेडीसिन, 'कू लोंग डेल्टा राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट और चीन की होंगकोंग यूनिवर्सिटी। 'गोल्डन राइस–1, जिसे शुरू में गोल्डन राइस नेटवर्क के देशों को वितरित किया गया था, की जगह मार्च 2009 में 'गोल्डन राइस–2' ने ले ली।

'गोल्डन राइस–2' को छह ईवेंटों के साथ अमरीका की लंबे दाने वाली केबोनेट किस्म में निविष्ट करके विकसित किया गया (पेने, 2005)। नियामक स्वीकृति और व्यापारीकरण के लिए केवल एक 'ईवेंट' ही चुना गया। इसके लिए 'जी आर 2 जी' की एकल प्रति निविष्ट की गई, जिसने 25 माइक्रोग्राम प्रति ग्राम, बीटा कैरोटिन पैदा किया। यह गोल्डन राइस–1 (जी आर 1) की तुलना में 3–4 गुना बीटा कैरोटिन बनाता है। यह ईवेंट अनेक कसौटियों पर खरा उतरने के बाद चुना गया, ताकि इसकी 100 ग्राम मात्रा खाने वाले एक से तीन साल के बच्चों की विटामिन–ए की जरूरत पूरी हो सके। (बारी, 2009; विर्क एंड बारी, 2009)। इसका अगला चरण यह था कि उन देशों की पहचान करना जहां 'गोल्डन राइस–2' (जी आर 2 जी) ईवेंट को विटामिन–ए की कमी वाले इलाकों की सबसे लोकप्रिय और आशाप्रद किस्मों में निविष्ट किया जा सके। फिलीपींस, भारत, बांग्लादेश, वियतनाम और इंडोनेशिया को इस तरह के देशों के रूप में छांटा गया, ताकि वहां 'जी आर–2 जी' ईवेंट को एकमात्र ईवेंट के रूप में नियामक निकायों के पास स्वीकृति के लिए भेजा जाए और अंत में खेती के लिए जारी किया जाए। आशा है कि सन् 2012 तक गोल्डन राइस फिलीपींस और बांग्लादेश में जारी कर दिया जाएगा और उसके बाद भारत, इंडोनेशिया तथा वियतनाम में। 'जी आर 2 जी' ईवेंट निविष्ट करने के लिए किस्मों का चुनाव इन देशों में विटामिन–ए की कमी वाले क्षेत्रों में लोकप्रिय और प्रचलित किस्मों के आधार पर किया गया है। 'जी आर 2 जी' निविष्ट करने का काम इन सभी देशों के अपने अनुसंधान संस्थान, अंतर्राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान, (इर्री) के सहयोग से कर रहे हैं और इस कार्य की निगरानी 'गोल्डन राइस ह्यूमेनिटेरियन बोर्ड' कर रहा है। इन देशों में से जिन तीन देशों में 'जी आर 2 जी' किस्मों में ये उत्पाद अत्यधिक प्रगति कर चुके हैं, वहां की किस्मों की सूची यहां दी जा रही हैः

फिलीपींस में में 'पी एस बी आर सी–82' नामक किस्म में 'जी आर 2 जी' ईवेंट को वहां के फिलीपींस राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट (फिलराइस) की मदद से निविष्ट किया जा रहा है। फिलीपींस के उपराऊं सूखे और तलाऊं नम यानी दोनों तरह के इलाकों में 'पीएसबीआरसी–82' अनुमानतः 13 प्रतिशत भूमि में उगाई जा रही है जो कि फिलीपींस के कुल 42 लाख हैक्टर वार्षिक धान क्षेत्र के लगभग 5 लाख हैक्टर के बराबर है।

बांग्लादेश में 'गोल्डन राइस–2 जी (जी आर 2 जी) ईवेंट को जिस किस्म में निविष्ट किया जा रहा है, वह है **बी आर–29** जो कि वहां की बोरो धान की सबसे महत्वपूर्ण किस्म है। यह जीनांतरण बांग्लादेश राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट के वैज्ञानिकों द्वारा किया जा रहा है। बांग्लादेश में 'बी आर 29' की खेती 28 लाख हैक्टर में की जाती है, जो कि वहां के कुल 100 लाख हैक्टर धान क्षेत्र का 28 प्रतिशत है।

भारत में धान की तीन लोकप्रिय किस्मों, स्वर्णा, एम टी यू–1010 और ए डी टी 43, में 'जी आर 2 जी' का जीनांतरण किया जा रहा है। स्वर्णा धान बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और आंध्र प्रदेश में बहुत लोकप्रिय है। इस किस्म को अनुमानतः लगभग 30 लाख हैक्टर में उगाया जाता है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान 'जी आर 2 जी' युक्त स्वर्णा धान का प्रजनन कर रहा है। आंध्र प्रदेश और निकटवर्ती क्षेत्रों में एम टी यू 1010 किस्म अत्यंत लोकप्रिय है और इसे 'कॉटन डोरा सनालू' भी कहते हैं। इसका अनुमानित क्षेत्र 8 लाख हैक्टर के करीब है। धान अनुसंधान निदेशालय, हैदराबाद के वैज्ञानिक इस किस्म 'जी आर 2–एम टी यू–1010' का प्रजनन कर रहे हैं।

अभी इस प्रारंभिक अवस्था में स्वीकृति से पहले यह अंदाज लगाना मुश्किल है कि 'गोल्डन राइस–2 वंशाणु' से युक्त किस्में इन तीनों देशों में कब तक और कितने क्षेत्र में उगाई जाएंगीं, क्योंकि इनको कदम–ब–कदम पूरी कागजी कार्रवाई से गुजारने के बाद ही खेती के लिए जारी करने की इजाजत मिलेगी। लेकिन इतना तो तय है कि 2012 तक धान की ये पोषक किस्में अपनाने की प्रक्रिया पूरी हो जाएगी और पहले फिलीपींस और फिर बांग्लादेश तथा भारत में इन किस्मों का प्रचलन हो जाएगा। हां, फिलहाल इतना अनुमान जरूर लगाया जा सकता है कि जो किस्में विकसित की जा रही हैं, उनको कितने क्षेत्र में उगाए जाने की संभावना है। फिलिपींस में इस समय 'पी एस बी आर सी–82' ने जितना क्षेत्र घेरा हुआ है, उतने क्षेत्र यानी लगभग 5 लाख हैक्टर में गोल्डन राइस–2 के गुणों वाली किस्म उगाई जा सकती है। इसी प्रकार बांग्लादेश में बी आर 29 लगभग 28 लाख हैक्टर में उगाई जा रही है और इस क्षेत्र में धीरे–धीरे 'जी आर 2 जी' युक्त धान को अपनाया जा सकता है।

भारत में पौष्टिक धान को अपनाया जा सकता है। भारत में पौष्टिक धान की किस्में 40 लाख हैक्टर में उगाए जाने की संभावना है क्योंकि इस समय स्वर्ण, एम टी यू 1010 तथा ए डी टी 43 का कुल मिलाकर 40 लाख हैक्टर क्षेत्र बनता है जिसमें इन तीनों की जीनांतरित किस्में इनका स्थान ले सकती हैं। इस प्रकार फिलिपींस, बांग्लादेश और भारत इन तीनों देशों में सन् 2012 तक गोल्डन राइस किस्मों का कुल क्षेत्र 70 लाख से 75 लाख हैक्टर होने की संभावना दिखाई देती है। पाठकों को यह समझ लेना चाहिए कि यह केवल संभावना पर आधारित अनुमान है और अभी तथ्यात्मक आकलन करना संभव नहीं है, क्योंकि वह स्वीकृति मिलने पर निर्भर करेगा, जिसकी गति इन देशों में प्रायः मंद होती है। फिर भी एक अंदाज तो लगता ही है कि काफी बड़े इलाके में ये देश गोल्डन राइस वाली किस्में 2012 तक अपना सकते हैं। गोल्डन राइस की खपत का एशिया में आर्थिक प्रभाव क्या हो सकता है, इस बारे में विशेषज्ञों ने जो हिसाब लगाया है, उसके अनुसार एशियाई देशों के जी डी पी में 4 अरब से 18 अरब अमरीकी डालर की बढ़ोतरी हो सकती है।

गोल्डन राइस परियोजना के अनेक पहलू हैं, जो इसे एक अनूठी परियोजना का दर्जा देते हैं। एक तो यह है कि इस अनुसंधान परियोजना में समान विचारों वाले भिन्न–भिन्न संगठन और व्यक्ति एकजुट हुए हैं, जिन्हें विश्व में विटामिन–ए की कमी वी ए डी–विटामिन ए डेफिसिएंसी से पीड़ित लाखों शिशुओं, बच्चों और वयस्कों की असमय मौतों की भयावहता ने उद्वेलित किया है। तमाम सरकारों ने इस समस्या से निपटने के लिए अनेक कदम उठाए हैं, इसलिए विश्व में गोल्डन राइस वाली धान की किस्मों का अवश्य ही खुले दिल से स्वागत होगा, क्योंकि प्रतिदिन 6000 बच्चों का विटामिन की कमी (वी ए डी) से काल–कवलित हो जाना किसी पत्थरदिल को भी पिघला सकता है (बारी 2009)।

जहां 'वी ए डी' से दक्षिण पूर्व एशिया में 33 प्रतिशत व्यक्तियों के प्रभावित होने का अनुमान है, वहीं लोहे की कमी (एनीमिया–रक्ताल्पता) 57 प्रतिशत को और जिंक यानी जस्ते की कमी 71 प्रतिशत को प्रभावित करती है। इस समय 'जी आर 2 जी' वाले ईवेंटों को धान के जनित्रद्रव्य में से छांटकर निकाली गई उन किस्मों के साथ जीनांतरण किया जा रहा है, जिनमें जिंक और आयरन का उच्च अंश मिलता है। इस तरह तीन विशेषक वाली पुंजित किस्मों का विकास करने की पहल चल पड़ी है। फिलहाल फिलिपींस में वहां के फिलराइस संस्थान में इन तीन विशेषकों को धान की एक ही किस्म में पुंजित करने का प्रयास किया जा रहा है। ये तीन विशेषक हैं, 'जी आर 2 जी' तथा धान के टूंग्रो विषाणु के प्रति और जीवाणु पतमारी के प्रति रोधिता के गुण।

सूखा सह्यता––सन् 2012 में अमरीका में और 2017 में अफ्रीका के उप सहारा क्षेत्र में सूखा सह मक्का की खेती शुरू होने की आशा है। विश्व में सन् 2009 में सूखे की स्थिति का विहंगावलोकन

'जल ही जीवन है' यह कहावत विश्व के लगभग सभी देशों की सभी भाषाओं में प्रचलित है। जल वास्तव में जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण और अमूल्य है। विश्व के मीठे पानी का लगभग 70 प्रतिशत औद्योगिक देशों में और 80 प्रतिशत विकासशील देशों में खेती में फसलों की सिंचाई के लिए इस्तेमाल किया जाता है। चीन जैसे देशों में भूजल का स्तर गिरता ही जा रहा है। जैसे–जैसे दुनिया की आबादी बढ़ती जा रही है, पेयजल की आपूर्ति भी सिकुड़ती जा रही है। इस समय हम 6. 7 अरब हैं और 2050 तक 9 अरब होने की आशंका है। हालांकि एक आदमी हर रोज एक–दो लीटर पानी ही पीता है, लेकिन हमारे खान–पान को बनाने में हर रोज शाकाहार और मांसाहार दोनों को मिलाकर 2000 से 3000 लीटर पानी प्रति व्यक्ति खर्च हो जाता है। अब जरूरत इस बात की है कि परंपरागत और आधुनिक जैव प्रौद्योगिक तकनीकों से ऐसी किस्में विकसित की जाएं जो कम पानी में उगाई जा सकें और सूखे को सहने की उनमें अधिक क्षमता हो। विश्व में गहराते जल–संकट को देखते हुए और फसल–उत्पादन में पानी की केंद्रीय भूमिका के मद्देनजर भावी फसलों को जल–सक्षम और सूखा–सह बनाने को इस समय सबसे ऊंची प्राथमिकता देने की जरूरत है। यह समस्या तब और भी विकट हो जाएगी जब ग्लोबल वार्मिंग यानी धरती का गरमाना, अपना असर बढ़ाने लगेगा और मौसम गरम और सूखा होता चला जाएगा और मानव और कृषि तथा उद्योगों में पानी के लिए खींचातानी शुरू हो जाएगी। हमें तो साफ दिखाई पड़ रहा है कि बायोटैक फसलों को अपनाने के दूसरे दशक में 2006 से 2015 के बीच जैव प्रौद्योगिकी से फसलों में सूखा सहने की क्षमता सबसे महत्वपूर्ण विशेषक बन जाएगा, क्योंकि पूरी दुनिया में सूखा ही फसलों की उत्पादकता बढ़ाने में सबसे बड़ा रोड़ा बना हुआ है।

यहां पर अत्यंत उत्साहप्रद समाचार यह है कि सन् 2012 में अमरीका में सूखा–सह बायोटैक/जी एम मक्का की खेती शुरू हो जाने के आसार हैं (देखें 'आईएसएएए' ब्रीफ–39 का परिशिष्ट–'मक्का में सूखा सह्यता : एक उभरती वास्तविकता') (जेम्स 2008)। अफ्रीका में सूखा सबसे विकट समस्या है, जहां सन् 2003 में सूखे से पैदा हुए खाद्य–संकट से निपटने के लिए खाद्यान्न की आपात्कालीन आपूर्ति पर विश्व खाद्य कार्यक्रम (डब्ल्यू एफ पी) को 57 करोड़ की खाद्य–सामग्री अफ्रीका में भेजनी पड़ी। सूखे से जुड़ी अनिश्चितता के कारण खाद्य–उत्पादन में स्थिरता लाने के सारे मंसूबे धरे रह जाते हैं, जब कि कृषि में आदानों

के पूरे लाभ लेने के लिए यह उल्लेखनीय है कि निजी क्षेत्र तथा सरकारी क्षेत्र की सहभागिता से वेमा (WEMA) नाम से 'वाटर एफीसिएंट मेज प्रोग्राम' अफ्रीका में प्रगति पर है। इस कार्यक्रम का समन्वय 'एएटीएफ' कर रहा है, जिसके लिए मोंसेंटो ने प्रौद्योगिकी दान की है और अन्य सहभागी हैंः बिल और मेलिंदा गेट्स फाउंडेशन, द होवार्ड बुफे फाउंडेशन (फंड दे रहे हैं) सिमिट और अनेक अफ्रीकी देशों के चुनींदा देशों के राष्ट्रीय कार्यक्रम। ये अफ्रीका देश हैंः मोजाम्बिक, केन्या, दक्षिण अफ्रीका, तंजानिया और उगांडा। वेमा के अंतर्गत अफ्रीका के उप सहारा क्षेत्र में सन् 2017 में सूखा–सह बायोटैक मक्का की रॉयल्टी से मुक्त किस्म के बीज उपलब्ध किए जाने की आशा है, क्योंकि वहां लगभग 6500 लाख लोग भूख मिटाने के लिए मक्का पर निर्भर हैं और वहां सूखा–सह मक्का की सबसे ज्यादा जरूरत है। सूखा बहुत उग्र न हुआ तो उस स्थिति में जल–सक्षम सूखा–सह मक्का को प्रचलित करने की वेमा परियोजना से मक्का की उपज 20 से 35 प्रतिशत बढ़ सकती है यानी 120 लाख टन मक्का अधिक पैदा हो सकती है, जिससे सूखे के वर्ष में भी 140 से 210 लाख अफ्रीकियों का पेट भरा जा सकता है। नवंबर 2009 में इस सूखा–सह बायोटैक मक्का की पहली परीक्षण फसल बोयी जा चुकी है और सूखा–सह मक्का की सामान्य किस्म भी 2013 तक उपलब्ध होने के आसार हैं। 'वेमा' के सामने अनेक चुनौतियां हैं, जिनमें से पहली है राष्ट्रीय स्तर पर इन सभी अफ्रीकी देशों में बायोटैक फसलों की जांच, स्वीकृति और निगरानी की सक्षम नियामक प्रणाली विकसित करना। फिर उच्च गुणवत्ता के संकर बीजों का उत्पादन और वितरण तथा छोटी जोत वाले किसानों के लिए आवश्यक फसली ऋण की व्यवस्था (ओइके, 2009)।

पिछले कुछ वर्षों में सूखों की बारंबारता और उग्रता दोनों बढ़े हैं, जिससे यह निष्कर्ष निकाला गया है कि जलवायु परिवर्तन के कारण सूखा बढ़ रहा है। सन् 2009 में सूखे के कारण खाद्य, पशु–आहार और रेशों वाली फसलों का वैश्विक उत्पादन काफी घटा था। यहां हम एरिक डी कार्बोनेल द्वारा की गई विश्व में 2009 में सूखे की स्थिति की समीक्षा दे रहे हैं, जिसमें कुछ जानकारी अन्य स्रोतों से प्राप्त करके जोड़ी गई है। कार्बोनेल ने निष्कर्ष निकाला है कि सूखे में 2009 में वे ही देश सबसे अधिक प्रभावित हुए जो विश्व का दो–तिहाई कृषि उत्पादन करते हैं।

अफ्रीका

नक्शे में सींग जैसे दिखाई देते अफ्रीकी इलाके में स्थित देशों में 2009 में सबसे अधिक सूखा पड़ा। इसका सबसे बुरा असर केन्या में पड़ा, जहां 100 लाख के करीब आबादी ने भुखमरी का सामना किया। इसके पड़ोसी देशों, तंजानियां, बुरुंडी, ईथोपिया और उगांडा में भी हालत लगभग ऐसी ही थी। दक्षिण अफ्रीका का अनुमान है कि वहां भी 2009 में पिछले 30 सालों में सबसे कम फसल पैदा होगी। अफ्रीका उप–सहारा क्षेत्र के जिन अन्य देशों ने सूखे की त्रासदी भोगी उनके नाम हैंः मलावी, जाम्बिया, स्वाजीलैंड, सोमालिया, जिम्बावे, अंगोला, मोजाम्बिक और उत्तर अफ्रीका में ट्यूनीसिया।

चीन

चीन में उत्तरी और उत्तर पूर्वी क्षेत्र में सामान्य से 50 से 90 प्रतिशत कम वर्षा दर्ज की गई और नवंबर 2008 से सूखे की हालत पैदा हो गई, जो कि पिछले 50 सालों का सबसे भयंकर सूखा था और इससे 100 लाख हैक्टर से अधिक कृषि भूमि प्रभावित हुई। इससे चीन में सबसे अधिक गेहूं पैदा करने वाले 8 प्रांतों की फसल बर्बाद हुई। इन प्रांतों के नाम हैंः हेनान (चीन में सबसे अधिक फसल पैदा करने वाला प्रांत), आनुहुई (50 प्रतिशत से अधिक फसल का नुकसान), शांक्सी, जिनाग्सू (20 प्रतिशत गेहूं की बर्बादी), हेबेई और शानडोंग जहां पिछले साल के मुकाबले 73 प्रतिशत कम वर्षा हुई। सूखे से निपटने के लिए चीन की सरकार को 2.7 अरब अमरीकी डालर के बराबर वित्तीय प्रावधान करना पड़ा। चीन के आठ प्रांतों के ग्रामीण क्षेत्रों में 40 लाख लोगों पर सूखे से तबाही का सीधा असर पड़ा। चीन के जिन क्षेत्रों में सूखे से फसलें बर्बाद हुईं, वे वहां के सबसे अधिक फसलें पैदा करने वाले इलाके थे जहां दुनिया का 18 प्रतिशत अनाज पैदा होता रहा है, जो 50 करोड़ टन प्रति वर्ष बैठता है। यहां यह उल्लेखनीय है कि चीन ने अपने यहां 2020 तक 54 करोड़ टन अनाज पैदा करने का लक्ष्य रखा है (जिन्हुआ, 2009 ए)। लेकिन अगर सूखा इसी तरह तबाही मचाता रहा और भूजल का स्तर नीचे गिरता चला गया तो इस लक्ष्य की पूर्ति करना बहुत कठिन हो जाएगा। जुलाई 2009 में सूखे ने चीन में अपने पंजे बढ़ाते हुए काफी बड़ा क्षेत्र घेर लिया और उसके पड़ौसी मंगोलिया का स्वायत्त क्षेत्र भी उसकी चपेट में आ गया। साथ ही जिंजानाग उगुरु स्वायत्त क्षेत्र, जिलिन, शांक्सी और लिओनिंग भी प्रभावित हुए (जिन्हुआ, 2009 बी)। यह बताया गया कि दस लाख वाहनों में से एक तिहाई का इस्तेमाल लगभग 70 लाख लोगों ने पेयजल और सिंचाई के लिए पानी ढोने में किया। बाद में 2009 में उत्तर और उत्तर पूर्व चीन में अगस्त 2009 में दक्षिण चीन में आए मोराकूट तूफान ने बाढ़ की भयंकर समस्या पैदा कर दी। इस तरह भयंकर सूखे के बाद भयंकर बाढ़, गरमाती धरती से हो रहे जलवायु–परिवर्तन से उत्पन्न कठिन नई चुनौती खड़ी कर रहे हैं।

आस्ट्रेलिया

आस्ट्रेलिया में सन् 2004 से ही सूखा पड़ता रहा है और सबसे भयंकर सूखा सन् 2006 और 2007 में पड़ा। यहां 117 साल पहले से सूखे के रिकार्ड रखे जा रहे हैं, लेकिन ये दो साल अब तक के सबसे उग्र सूखा–वर्ष साबित हुए। यह आकलित किया गया है कि 2006/07 के विनाशकारी सूखों से अब भी आस्ट्रेलिया की 40 प्रतिशत कृषि उबर नहीं पाई है। ये सूखे इतने विकट थे कि वहां की मुरे नदी जैसी प्रमुख नदियां तो बहना ही भूल गईं।

अमरीका

सन् 2009 में अमरीका के टैक्सास राज्य में 50 वर्षों का सबसे बड़ा सूखा पड़ा था। इस सूखे से कितनी आर्थिक हानि हुई, इसका हिसाब लगाया तो टैक्सास को 3.5 अरब डालर का और कुल कृषि क्षेत्र को 20 अरब डालर का घाटा उठाना पड़ा। (द इकोनोमिस्ट, 2009डी)। 2009 का सूखा भी यहां सन् 1917 से अब तक का सबसे बड़ा सूखा था और हिसाब लगाया गया कि टैक्सास के 88 प्रतिशत इलाके को इस सूखे का खामियाजा भुगतना पड़ा। टैक्सास के गवर्नर ने राज्य के अधिकांश भाग को भयंकर आपदा की चपेट में घोषित कर दिया, क्योंकि अधिकतर इलाकों को असाधारण सूखे मौसम का सामना करना पड़ा और 18 प्रतिशत राज्य ने सबसे प्रचंड सूखे की मार बर्दाश्त की। जून और जुलाई 2009 में टैक्सास के ऑस्टिन के इलाको में 61 दिनों से 39 दिनों में तापमान तीन अंकों के स्तर पर पहुंच गया यानी आधे से ज्यादा दिनों तक जून–जुलाई में बेहद गर्मी पड़ी। सन् 2009 में कैलीफोर्निया में भी जब से मौसम के रिकार्ड रखना शुरू किया गया है तब से अब तक का सबसे भारी सूखा पड़ा। हजारों हैक्टर में फैले खेत–दर–खेत सूखे की चपेट में आकर रेत की ढेरियों में बदल गए। सियरा की बर्फीली चोटियों से बहता पानी यहां के अधिकतर जलाशयों को भरता है, लेकिन सूखे के कारण इन सभी जलाशयों में पानी का स्तर आधे से भी कम होकर 49 प्रतिशत रह गया। इस सूखे से अमरीका के जिन अन्य राज्यों का नुकसान हुआ, उनमें शामिल हैंः फ्लोरिडा, जॉर्जिया, उत्तरी कैरोलिना और दक्षिणी कैरोलिना। अमरीका में सन् 2009 में सूखे के साथ बाढ़ की समस्या का भी सामना करना पड़ा और इन दोनों के बारे में मौसमविज्ञानियों का मत है कि ये समुद्र की गरम और ठंडे पानी की अलनीनो और सूखी ला–नीना तरंगों की देन थे। ला–नीना प्रशांत महासागर में ठंडे पानी की लहरों से जुड़ी है और उसने अमरीका में सूखा जा पटका, जिससे अमरीका के दक्षिणी राज्यों और अन्य भागों में सूखे मौसम ने पसीने निकाल दिए।

दक्षिण अमरीका

अर्जेंटीना में 2009 में पिछले 50 सालों के सबसे भयंकर सूखे ने खासतौर से वहां के कोरडोबा राज्य में अनाज का उत्पादन काफी घटा दिया। ब्राजील विश्व में सोयाबीन का दूसरा सबसे बड़ा निर्यातक है और वहां भी ये फसल सूखे से प्रभावित हुई। दक्षिण अमरीका के अन्य कई देश भी 2009 से सूखे की चपेट में आ गए, जिनमें मैक्सिको, पैराग्वे, उरुग्वे, बोलीविया और चिली शामिल हैं। यहां भी ला–नीना ने बादलों को भगा दिया और वे चिली और दक्षिण अमरीका के अन्य इलाकों को नहीं भिगो सके।

मध्य पूर्व और मध्य एशिया

इन इलाकों के देशों में भी 2009 में सूखा पड़ा, जिसने फसलों की पैदावार घटाई। गेहूं की फसल की पैदावार में लगभग 20 प्रतिशत की कमी हुई। इन दोनों इलाकों में जलाशयों में पानी का स्तर काफी घट गया और यह संकट भी पैदा हो गया कि जो किसान अगली फसलों के लिए बीज बचाकर रखते थे, वे वैसा नहीं कर पाएंगे। कुछ इलाकों में मौसम की गर्मी आपसी गरमा–गर्मी में बदल गई और राजनीतिक अस्थिरता और युद्ध की लपटें उठीं। इससे यहां के कुछ देशों की सूखे से निपटने की मुश्किलें और भी बढ़ गईं। इस क्षेत्र में जिन देशों ने अपने–अपने यहां 2009 में सूखा घोषित किया, वे हैंः ईराक, सीरिया, अफगानिस्तान, जोर्डन, फिलिस्तीन का इलाका, लेबनान, इजराइल, बांग्लादेश, म्यांमार, ताजिकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान, थाइलैंड, नेपाल, पाकिस्तान, टर्की, किर्जिस्तान, साइप्रस और ईरान।

यूरोप

सन् 2009 की दुनिया में यूरोप एकमात्र ऐसा इलाका था, जहां सूखे से अपेक्षाकृत कम नुकसान हुआ। हालांकि हाल के वर्षों में यूरोप के स्पेन और पुर्तगाल जैसे देशों ने अनेक बार सूखे का सामना किया है।

कुल मिलाकर 2009 में विश्व में सूखे की स्थिति भविष्य के प्रति यह चेतावनी देती है कि धरती के गरमाने और जलवायु–परिवर्तन से जैसी कि आशंका व्यक्त की गई थी, सूखे की घटनाएं लगातार बढ़ती रहीं तो औद्योगिक देशों की तुलना में विकासशील देशों में सूखे मौसम की वजह से मुसीबतें और भी बढ़ जाएंगीं। (कहना न होगा कि ऐसी स्थिति से निपटने में सूखा–सह बायोटैक फसलों की भूमिका और भी महवत्पूर्ण हो जाएगी।)

नाइट्रोजन के उपयोग की दक्षता (एन यू ई)

सन् साठादिक की अप्रत्याशित सफलता के पीछे जिन बाहरी कृषि–आदानों की सबसे बड़ी भूमिका रही, वे थे नाइट्रोजन और पानी, जिन्होंने गेहूं और चावल दोनों की पैदावार बढ़ाने में भारी योग दिया। विश्व के 70 प्रतिशत मीठे पानी को कृषि पी जाती है और विश्व स्तर पर मीठे पानी की उपलब्धता बराबर कम होती जा रही है, भूजल का स्तर नीचे ही नीचे गिरता जा रहा है। इससे खासतौर से चीन जैसे जनसंख्या–बहुल देशों की परेशानियां बढ़ती जा रही हैं। इस समस्या से निपटना विश्व की पहली प्राथमिकता बन चुका है। इसी के साथ फसलों में नाइट्रोजनधारी उर्वरकों के निर्माण में जीवाश्मी उत्पादों का उपयोग होता है और इन क्षयशील पदार्थों पर यह निर्भरता काफी घटानी होगी। दूसरे, नाइट्रोजनी उर्वरकों के कारण ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बढ़ता है और जल–स्रोतों में उनके पहुंच जाने से पानी इतना प्रदूषित हो जाता है कि पीने योग्य नहीं रहता। हिसाब लगाया गया है कि इस समय मानव–शरीर में जितने नाइट्रोजन के परमाणु हैं, उनमें से आधे जीवाश्मी ईधन पर आधारित अमोनिया से पहुंचे हैं। विश्व में इस्तेमाल हो रहे नाइट्रोजनी उर्वरकों की कुल कीमत लगभग 100 अरब डालर बैठती है। यह भी हिसाब लगाया गया है कि दो–तिहाई नाइट्रोजन–उत्पाद फसलों को मिलते ही नहीं और मिट्टी में रिस जाते हैं या सिंचाई के पानी के साथ बह जाते हैं या गैस बनकर हवा में उड़ जाते हैं। साथ ही जल–स्रोतों में शैवाल फुल्लिकाएं बनाते हैं। इनकी वजह से नदियों के मुहानों और कछारों तथा नम–भूमियों में 'मृत–क्षेत्र' बन जाते हैं, जहां मछली सहित सभी जल–जीवों का दम घुटने लगता है। पूरे विश्व में यह आपदा बढ़ती ही जा रही है और इसका विकराल रूप अमरीका में मिसीसिपी नदी के मुहाने और दक्षिण पूर्व एशिया के मेकोंग डेल्टा में देखा जा सकता है। मिट्टी में से नाइट्रोजन–उर्वरकों का एक बड़ा हिस्सा नाइट्रस ऑक्साइड गैस में तबदील होकर हवा में उड़ जाता है। ये गैस धरती को गरमाने में कार्बन डाइआक्साइड से 300 गुना ज्यादा असर डालती है और किसी भी दूसरी ग्रीन हाउस गैस से ज्यादा खतरनाक है। जहां एक ओर खेती के तौर–तरीकों में सुधार करके फसलों की नाइट्रोजन की जरूरत घटाकर आधी की जा सकती है, वहीं नाइट्रोजन की दक्षता बढ़ा सकें, ऐसी बायोटैक फसलें विकसित करने की दिशा में भी उत्साहजनक प्रगति हो रही है। इनमें से अनेक बायोटैक–उत्पाद अगले पांच सालों में उपलब्ध हो सकते हैं, जो कि नाइट्रोजन यूज एफिसिएंसी (एन यू ई) को 30 प्रतिशत तक तो बढ़ा ही देंगे। बल्कि कुछ बायोटैक–उत्पाद तो ऐसे हैं कि उनके प्रारंभिक प्रयोगों में नाइट्रोजन की दक्षता में 50 फीसदी तक का इजाफा हुआ है (रिडले, 2009)। बायोटैक फसलों ने पहले ही पैदावार बढ़ाकर और कीटनाशियों का छिड़काव घटाकर काफी फायदा पहुंचाया है, वहीं अगले पांचेक सालों में नाइट्रोजन–सक्षम बायोटैक फसलों से यह फायदा कई गुना बढ़ जाएगा। हाल में 'द इकोनोमिस्ट' ने यह घोषणा की थी कि **'जीनांतरित फसलें पर्यावरण की समस्याएं घटाने में चमत्कारी साबित होंगीं।'** रिडले (2009) ने यह विचार प्रकट किया है कि जैविक खेती का अभियान संभवतः नाइट्रोजन उपयोग–दक्षता प्रौद्योगिकी को मजाक बना देगा और किसानों का हवा से नाइट्रोजन खींचकर पौधों को सुलभ कराने वाली फलीदार फसलें और खाद का इस्तेमाल, 'एन यू ई' की जरूरत को खत्म ही कर देगा। लेकिन रिडले ने यह भी बताया कि जैविक खेती की जैविक खाद की जरूरत पूरी करने के लिए विश्व में गायों की आबादी वर्तमान 120 करोड़ से बढ़ाकर 700 से 800 करोड़ तक बढ़ानी पड़ेगी (स्मिल, 2004) और यह सवाल भी उठाया कि इस विपुल गोधन को खिलाने लायक इतना विशाल चारा और चरागाह कहां से आएंगे।

क्या बायोटैक गेहूं–निकट भविष्य में ही आने वाला है

जेफ्री एल फॉक्स ने अपने हाल के एक लेख (2009) में यह सवाल उठाया कि 'जी एम गेहूं का क्या हुआ?' असल में 2009 के मध्य में ऐसे अनेक संयोग दिखाई दिए हैं कि बायोटैक–गेहूं के अवतरण की संभावना बढ़ गई है। हालांकि पांच साल से यह कार्यक्रम ठंडे बस्ते में पड़ा था और मोंसाटो ने उत्पादकों और उपभोक्ताओं में इसके प्रति कोई उत्साह नहीं देखा तो सन् 2004 में ही अपने 'RR^{R} गेहूं' विकसित करने के काम को रोक दिया था। लेकिन फिर पांच ऐसे परिवर्तन नजर आए, जिन्होंने बायोटैक गेहूं को विकसित करने का उत्साह फिर से जगा दिया। पहला परिवर्तन यह हुआ कि अमरीका, कनाडा और आस्ट्रेलिया के नौ प्रमुख गेहूं कारोबारी संगठनों ने यह घोषणा की कि **'हम गेहूं की फसल में बायोटैक विशेषकों का सुसंगत व्यापारीकरण करने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रतिबद्ध हैं।''** अमरीका के गेहूं–उत्पादकों में से अब 75 प्रतिशत बायोटैक गेहूं की खेती के लिए तैयार हैं (नेशनल एसोसिएशन ऑफ व्हीट ग्रोअर्स, वाशिंगटन, डी सी, 2009)। तीसरे, मोंसांटो ने 2009 में 'वेस्टब्रैड' के गेहूं–कार्यक्रमों का अधिग्रहण कर लिया और यह इच्छा प्रकट की कि वह अपना बायोटैक–गेहूं विकसित करने का काम फिर से शुरू करना चाहेगा। इसके लिए दीर्घकालिक लक्ष्य बना लिया है और इसके लिए सभी तकनीकें अपनाई जाएंगी। चौथे, 'बायर क्रोपसाइंस' ने घोषणा की कि वह आस्ट्रेलिया के वैज्ञानिक अनुसंधान संगठन 'सी एस आई आर ओ' से मिलकर 'जी एम गेहूं' का विकास करेगा। इसका लक्ष्य है कि वह 2015 तक गेहूं उत्पादकों के लिए बायोटैक समाधान लाएगा। पांचवां और आखिरी परिवर्तन यह हुआ कि कुछ विशेषज्ञों ने गेहूं में बायोटैक–गतिविधियों की समीक्षा के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि विश्व में बायोटैक गेहूं का सबसे पहले व्यापारीकरण चीन करेगा, संभवतः अगले तीन साल में ही (फॉक्स, 2009)।

पिछले एक दशक में गेहूं के क्षेत्र में कमी आई है क्योंकि उसकी उत्पादकता जहां तक पहुंच गई, उससे ऊपर नहीं जा पा रही। मक्का और सोयाबीन की तुलना में गेहूं की उत्पादकता में ठहराव आ गया है। ये दोनों फसलें बायोटैक किस्मों से लाभान्वित हुई हैं। उदाहरण के लिए मक्का की उत्पादकता में 1.6 प्रतिशत की बढ़ोतरी हो चुकी है, जो 2050 तक खाद्य–उत्पादन को बढ़ाने की न्यूनतम वृद्धि की शर्त को पूरी करती है। जबकि गेहूं की उत्पादकता इस लक्ष्य को प्राप्त करने में लगातार असफल होती रही है और उसके उत्पादन में घटते जाने का रुख देखा जा रहा है।

बायोटैक–गेहूं के अनुसंधान के नेता कौन हैं? चीन की कृषि विज्ञान अकादमी (कास–सी ए ए एस) संभवतः विश्व में बायोटैक–गेहूं का विकास करने में सबसे अधिक निवेश कर रही है। 'कास' का प्रयास यह है कि बायोटैक–गेहूं में पीले मोजैक विषाणु हैड स्कैब व चूर्णिल फंफूद जैसे रोगों के प्रति रोधिता तथा सूखा और लवणीयता के प्रति रोधिता के साथ ही दानों की गुणवत्ता में सुधार और खरपतवारनाशी दवाओं के प्रति रोधिता के तमाम गुण एक ही किस्म में निविष्ट करा दें। समाचार यह है कि सन् 2008 में चीन की सरकार ने बायोटैक–गेहूं में अनुसंधान के लिए किसी भी अन्य बायोटैक फसल से अधिक वित्तीय प्रावधान किया। इस चीनी बायोटैक–गेहूं की खेती चीन अपने यहां अगले पांच सालों में कर सकता है, (शिपिंग, 2008; स्टोन 2008)। पता यह भी चला है कि सभी गुण एक ही बायोटैक–गेहूं में निविष्ट करने में सफलता नहीं मिली है, इसलिए पांच साल में पहला बायोटैक– गेहूं पीले मोजैक वायरस के प्रति रोधिता वाला होगा। चीन की कृषि विज्ञान अकादमी ही नहीं, वहां के हेनान कृषि विश्वविद्यालय में 40 चीनी वैज्ञानिक ऐसा बायोटैक– गेहूं विकसित करने का प्रयास कर रहे हैं, जो भंडारण के समय अंकुरित न हो। क्योंकि भंडारण में गेहूं में से अंखुए फूट आने से लगभग 20 प्रतिशत गेहूं का नुकसान होता है और न वह खाने लायक रहता है और न उगाने लायक। ये अंकुरण–रोधी बायोटैक–गेहूं विकसित कर लिया गया है और इस पर अब परीक्षण करने का तीसरा वर्ष है। कुछ आशावादी कृषि–पर्यवेक्षकों का अनुमान है कि अगले दो–तीन साल में विश्व का पहला बायोटैक–गेहूं अंकुरण–रोधिता के गुण के साथ चीन में खेती के लिए जारी कर दिया जाएगा। (फॉक्स 2009)।

भारत भी बायोटेक गेहूं के विकास को प्राथमिकता दे रहा है और यह अनुसंधान भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली में चल रहा है। वहां बायोटैक गेहूं के ऐसे अनेक वंशक्रम विकसित कर लिए गए हैं, जिन में सूखा–रोधिता और रोग–रोधिता के गुण डाल दिए गए हैं और उन पर आगे परीक्षण जारी है। 'माहिको' भारत की सबसे बड़ी देशी बीज–कंपनी है और उसने पौध–प्रजनन की सामान्य विधि अपनाकर संकर–गेहूं की अनेक किस्में विकसित की हैं और 'संकर–गेहूं' का बीज किसानों के लिए उपलब्ध कर दिया गया है। इस कंपनी के पास इससे पहले 'बीटी कपास' सफलतापूर्वक विकसित करने का अनुभव है, अतः वह बायोटैक–गेहूं विकसित करने के प्रयास भी सफलतापूर्वक कर सकती है। बायोटैक गेहूं के विकास में संलग्न अनुविका (अनुसंधान एवं विकास) संगठनों के सामने, निजी क्षेत्र और सरकारी क्षेत्र, दोनों के लिए ही सबसे बड़ी चुनौती है सूखारोधी 'बायोटैक गेहूं' विकसित करने की, जिसकी इस समय सबसे अधिक आवश्यकता है।

औद्योगिक देशों में बायोटैक–गेहूं

औद्योगिक देशों में से अमरीका और आस्ट्रेलिया दोनों ही इस दिशा में सक्रिय हैं। अमरीकी कृषि विभाग (यू एस डी ए) प्रति वर्ष इस परियोजना पर 400 लाख अमरीकी डालर खर्च कर रहा है। इस तरह के 125 अनुसंधान कार्यक्रम फिलहाल अमरीका में चल रहे हैं। इनमें ऐसे बायोटैक गेहूं को विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है, जिसमें दानों की गुणवत्ता, सूखा–रोधिता और रोग–रोधिता के गुण हों। इनमें से कुछ परियोजनाएं पूर्णता की ओर अग्रसर हैं और उनके 'फील्ड ट्रायल' चल रहे हैं। यू एस डी ए ने चीन के साथ सहयोगी कार्यक्रम भी चलाया हुआ है और चीन की राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी के साथ सामान्य पौध प्रजनन से तथा बायोटैक विधि से गेहूं की उन्नत किस्में विकसित करने की कोशिशें चल रही हैं। बायोटैक गेहूं के अनुसंधान में आस्ट्रेलिया भी काफी आगे है और वहां का वैज्ञानिक अनुसंधान संगठन, 'सी एस आई आर ओ' और 'बायर क्रोपसाइंस' मिलकर एक संयुक्त परियोजना चला रहे हैं, जिसमें 'गेहूं के ऐसे वंशक्रम विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है, जिनमें अधिक उपज देने की क्षमता के साथ–साथ सूखा आदि अजैविक तथा रोगों जैसे जैविक दबावों के प्रतिरोधिता के गुण हैं और साथ ही फास्फोरस के दक्षतापूर्ण उपयोग का भी गुण हो।' इस सरकारी और निजी क्षेत्र के सहयोग के फलस्वरूप अगले पांच वर्षों में 2015 तक आस्ट्रेलिया बायोटैक गेहूं की किस्में खेती के लिए जारी कर सकता है। (फॉक्स, 2009)। 'आस्ट्रेलियन जीन टैक्नोलोजी रेगुलेटर' ने सी एस आई आर ओ द्वारा विकसित '16 जी एम व्हीट लाइंस' के फील्ड ट्रायलों की अनुमति पहले ही प्रदान कर दी है। इनमें गेहूं के दानों का गठन बदला गया है और इनको जुलाई 2009 से 2012 के बीच परखा जाएगा। (ओ जी टी आर, 2009)। आस्ट्रेलिया का ही 'विक्टोरियन डिपार्टमेंट ऑफ प्राइमरी इंडस्ट्रीज,' ला ट्रोब यूनिवर्सिटी के साथ सहभागिता के साथ ही 'डो एग्रो साइंसेज' कंपनी के साथ मिलकर सूखारोधी बायोटैक गेहूं विकसित कर चुका है और पिछले दो सालों से वहां इसके फील्ड ट्रायल चल रहे हैं, जिनके बड़े आशाप्रद परिणाम निकले हैं। उम्मीद यह है कि अगले 5 से 10 सालों में 'जी एम गेहूं' की किस्में भी किसानों के लिए उपलब्ध हो जाएंगीं। (डिपार्टमेंट ऑफ प्राइमरी इंडस्ट्रीज, 2009)। सिंजेंटा कंपनी ने *फ्यूजेरियम* नामक फंफूदी के प्रतिरोधिता वाले गुण को व्यक्त करने वाले वंशाणु गेहूं में डालकर बायोटैक गेहूं विकसित करने का अपना कार्यक्रम काफी आगे बढ़ा दिया था। लेकिन उसे लगा कि शायद कृषि जगत इसमें दिलचस्पी नहीं ले रहा, इसलिए सिजेंटा ने इस शोधकार्य को पांच साल पहले रोक दिया था। लेकिन अब बायोटैक गेहूं में गेहूं–उत्पादक देशों की बढ़ती दिलचस्पी को देखकर इस कंपनी ने भी बायोटैक गेहूं विकसित करने का शोधकार्य तेज कर दिया है। सिंजेंटा का एक समाजसेवी संगठन है– 'फाउंडेशन फॉर सस्टेनेबल एग्रीकल्चर'। इसने हाल में मैक्सिको में स्थित 'अंतर्राष्ट्रीय मक्का और गेहूं अनुसंधान केंद्र–'सिमिट' के साथ मिलकर गेहूं में तनारोधिता का वंशाणु डालने की परियोजना शुरू की है। (सिंजेटा, 2009)। दुनिया की सबसे बड़ी बीज कंपनी मोंसांटो ने भी जुलाई 2009 में गेहूं की अधिक उपज, सूखारोधिता तथा रोगरोधिता के गुणों वाली किस्में विकसित करने के एक विशाल कार्यक्रम की घोषणा की। इस कार्यक्रम में नाइट्रोजन–सक्षमता का गुण भी निविष्ट किया जाएगा। गेहूं की इन उन्नत किस्मों के विकास में पौध–प्रजनन की सामान्य विधियां और जीनांतरण–प्रौद्योगिकी दोनों का उपयोग किया जाएगा, लेकिन बायोटैक गेहं विकसित करने का कार्यक्रम दीर्घकालिक है। मोंसांटों को आशा है कि उसका बायोटैक गेहूं अगले 8 से 10 सालों में किसानों को खेती के लिए उपलब्ध करा दिया जाएगा। इस बायोटैक गेहूं में खरपतवारनाशी दवा के प्रतिरोधिता का गुण निविष्ट करने की बजाय 'गेहूं

की अनेक प्रचलित किस्मों में अनेक वांछनीय गुण' निविष्ट करने का प्रयास किया जाएगा। हो सकता है कि मक्का के कुछ वंशाणु गेहूं में निविष्ट किए जाएं।'। इसके लिए आवश्यक वैज्ञानिकों के चयन और प्रशिक्षण इत्यादि पर मोंसाटो 'बीचाल–बोरलोग फैलोशिप प्रोग्राम' के अधीन 100 लाख डालर की परियोजना शुरू कर रहा है। इसमें गेहूं के साथ–साथ धान की बायोटैक किस्में विकसित की जाएंगीं। इस फैलोशिप प्रोग्राम का प्रबधंन 'टैक्सास ए एंड एम यूनिवर्सिटी' करती है, जहां डा. बोरलोग अंतिम दिनों में मानद प्रोफेसर थे। ये फैलोशिप खासतौर से सरकारी अनुसंधान संस्थानों के युवा वैज्ञानिकों के लिए है (मोंसांटो, 2009 बी)।

यहां यह उल्लेखनीय है कि चीन और भारत दोनों ही अपने यहां जितना गेहूं पैदा करते हैं, वह सबका सब दोनों देशों में घरेलू तौर पर ही खप जाता है। इन देशों को गेहूं आयात भी करना पड़ता है। उत्तरी अमरीका और यूरोप के बीच व्यापारिक मतभेद के कारण भले ही घरेलू खपत में बायोटैक फसलें उपेक्षित हों, लेकिन चीन और भारत में बायोटैक गेहूं केवल घरेलू बाजार के लिए उपलब्ध होगा। इन देशों के नियामक निकाय भी बायोटैक गेहूं की अनुमति में अपने देशों की खाद्य–सुरक्षा पर ही ज्यादा ध्यान देंगे, क्योंकि उन्हें बायोटैक गेहूं निर्यात नहीं करना। इसलिए बायोटैक फसलों के लिए तय किए गए अंतर्राष्ट्रीय मानकों की चिंता उन्हें कम से कम बायोटैक गेहूं के लिए तो नहीं करनी होगी। यही बात उन देशों पर भी लागू होती है, जो चावल और मक्का का आयात करते हैं।

पिछले कुछ वर्षों में बायोटैक गेहूं पर चर्चाओं में अब वे मुद्दे नहीं उठ रहे जो, सन् 2003 और 2004 में उठाए जा रहे थे। अब परिस्थितियां बदली हैं और उनके साथ मुद्दे भी बदल गए हैं। नॉर्थ डेकोटा के एक गेहूं उत्पादक ऐलन स्कोगन का कहना है कि 'गेहूं उद्योग अब पूरा चक्कर काटकर सही रास्ते पर आ गया है और अब उसमें बायोटैक–गेहूं विकसित करने के मुद्दे पर कोई विवाद नहीं है, बल्कि एकता है।'' ऐलन 'ग्रोअर्स बायोटैक्नोलोजी' नामक संस्था का प्रमुख भी है। उसका कहना है, ''**यदि हम गेहूं की किस्में विकसित करने के लिए बायोटैक तकनीकें इस्तेमाल करें तो निःसंदेह गेहूं का उत्पादन बढ़ेगा। सबसे बड़ा मुद्दा है पानी की बचत का और गेहूं में किसानों को ऐसी किस्म चाहिए जो सूखा सह सके।'' (फॉक्स 2009)।**

अन्य फसलें और विशेषक (ट्रेट)

सन् 2015 से ऐसी अनेक बायोटैक फसलों की स्वीकृति मिल सकती है जिनकी खेती मध्यम क्षेत्र में ही की जाती है। इन किस्मों की एक आंशिक सूची इस प्रकार हैः **बायोटैक–आलू** जिसमें कीट–रोधिता और रोग–रोधिता के साथ ही पोषक और औद्योगिक गुणों का विकास किया जा रहा है। **बायोटैक गन्नाः** जिसमें उच्च गुणवत्ता और शस्यात्मक विशेषक निविष्ट किए जा रहे हैं। **रोगरोधी केला**; विषाणुरोधी **फलियां** तथा कुछ ऐसी बायोटैक फसलें भी आ रही हैं; जिनको एक तरह से अनाथ कहा जा सकता है, जैसे कि **बी टी बैंगन,** जो कि भारत में सन् 2010 में ही पहली बायोटैक खाद्य फसल के रूप में उपलब्ध हो जाएगा, बशर्ते कि सरकार इसको स्वीकृति प्रदान कर दे। इसका 14 लाख छोटी जोत वाले किसानों को अपनी आमदनी बढ़ाने में फायदा मिलने की संभावना है। अन्य सब्जियों में से **बायोटैक टमाटर, ब्रोकोली, पत्तागोभी** और **भिंडी** का भी विकास किया जा रहा है, खासतौर से इन्हें अधिक टिकाऊ रखने तथा कीटरोधिता के लिए, ताकि उन पर कीटनाशी दवाओ के छिड़काव में कटौती हो। इसके साथ ही अनेक ऐसी फसलों की भी बायोटैक किस्मों का विकास चल रहा है, जो मुख्य रूप से गरीबों का आहार है, जैसे कि बायोटैक कसावा या टेपिओका, शकरकंद, दलहन और मूंगफली। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि इनमें से अनेक फसलों की बायोटैक किस्में राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा विकासशील देशों में ही विकसित की जा रही हैं। वहां इनकी खेती मुख्य रूप से की जाती है और जहां उनका अधिक उपयोग भी किया जाता है। इन सभी फसलों की बायोटैक किस्मों के विकास के कार्यक्रम जिस तरह चल रहे हैं, वे 'आईएसएएए' की उस भविष्यवाणी के अनुरूप ही हैं, जब हमने यह पूर्वानुमान व्यक्त किया था कि सन् 2015 तक दुनिया के 40 देशो में 200 लाख या इससे अधिक किसान 2000 लाख हैक्टर में बायोटैक फसलें उगा रहे होंगे।

जैव ईंधन (बायोफ्यूअल)

जैव प्रौद्योगिकी के उपयोग से मानव–आहार, पशु–आहार और रेशे वाली बायोटैक–फसलों की पहली पीढ़ी और जैव ईंधन के लिए दूसरी पीढ़ी की ऊर्जा–फसलों की दक्षता बढ़ाने की बहुत संभावनाएं हैं। **'यहां हम यह स्पष्ट कर दें कि जैव ईंधन के लिए फसलों का चयन और 'अनुविका' की रणनीति बनाने के लिए देश–दर–देश की स्थानीय परिस्थितियों का ध्यान रखना जरूरी है और खाद्य–सुरक्षा को प्राथमिकता दी जाए और मानव–आहार तथा पशु–आहार वाली फसलों तथा जैव ईंधन वाली फसलों के बीच स्पर्धा न पैदा की जाए।** ''जिन देशों में खाद्य–सुरक्षा अभी सुनिश्चित नहीं हो पाई है, उनमें यदि मानव–आहार और पशु–आहार वाली फसलों जैसे कि गन्ना, कसावा और मक्का को जैव ईंधन बनाने के लिए इस्तेमाल किया गया तो खाद्य–सुरक्षा के लक्ष्य धरे रह जाएंगे। इन फसलों की दक्षता अगर जैव प्रौद्योगिकी और अन्य साधनों के उपयोग से बढ़ाई नहीं गई तो मानव–आहार, पशु–आहार और रेशे वाली फसलों की पैदावार बढ़ाने के लक्ष्य पूरे नहीं किए जा सकेंगे। जैव ईंधन बनाने की पहली पीढ़ी और दूसरी पीढ़ी दोनों के लिए जैव प्रौद्योगिकी का लक्ष्य यह है कि बायोमास की उपज बढ़ाकर प्रति हैक्टर अधिक जैव ईंधन बनाने में सफलता प्राप्त की जाए, ताकि लागत–लाभ की दृष्टि से जैव ईंधन बनाना और इस्तेमाल करना मुनाफे का सौदा साबित हो। इस तरह जो ईंधन बनेगा वह भी सबके बूते का होगा। फिर भी बायोटैक फसलों की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका तो यही होगी कि वे संयुक्त राष्ट्र के मानवीय सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों को पूरा करने में योग दें और सबको उचित कीमत पर भरपूर भोजन उपलब्ध करायें और सन् 2015 तक गरीबी और भूख की समस्या को घटाकर आधा कर दें।

विश्व में क्षेत्रानुसार प्रगति

बायोटैक फसलों के प्रथम दशक–1996–2005–की तुलना में 2006–2015 के दूसरे दशक में पूरी आशा है कि विश्व के विविध क्षेत्रों में बायोटैक फसलों की अच्छी और अधिक प्रगति होगी। पहला दशक उत्तरी और दक्षिणी अमरीका ने बायोटैक फसलों की वृद्धि का दशक रहा, जहां पुंजित विशेषकों को खासतौर से उत्तरी अमरीका में और ब्राजील में अपनाया गया और मजबूत बढ़वार प्रदर्शित की गई।

बायोटैक फसलों का उत्तरदायित्वपूर्ण प्रबंधन

पहले दशक की तरह दूसरे बायोटैक–दशक में भी खेती के सुधरे तरीके सफलता के लिए महत्वपूर्ण बने रहेंगे, जैसे कि सही फसल–चक्र अपनाना और रोधिता–प्रबंधन। सभी पक्षकारों को इसमें उत्तरदायित्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी और उत्तम कृषिविधियों का प्रतिबद्धतापूर्ण, कार्यान्वयन करना होगा, खासतौर से दक्षिणी विश्व के देशों को, जो कि दूसरे बायोटैक–दशक में बायोटैक फसलों को बढ़–चढ़कर अपनाएंगे और 2006 से 2015 तक बायोटैक फसलों की अधिकतर प्रगति इन्हीं विकासशील देशों में होने वाली है। उम्मीद यह है कि 2015 से पहले ही विकासशील देशों में बायोटैक फसलों का क्षेत्र औद्योगिक देशों की तुलना में अधिक बढ़ जाएगा।

विकट चुनौती

'द इकीनोमिस्ट' ने सन् 2009 के अपने एक अंक में (2009) बड़ा विचारोत्तेजक लेख प्रकाशित किया था, जिसका शीर्षक था ''अगर शब्द खाए जा सकते तो कोई भूखा न रहता।'' (''इफ वर्डस् वेयर फूड नो बडी वुड़ बी हंग्री)। इसमें यह दलील दी गई थी कि पिछले बीस सालों से अंतर्राष्ट्रीय दानदाताओं और विकास के लिए फंड देने वाली संस्थाओं ने अपना हाथ खींच लिया था और कृषि अनुसंधान और विकास के लिए फंडों की लगातार कमी हो रही थी। लेकिन अब 2008 के खाद्य–संकट और महंगाई के बाद से यह स्थिति पलटने लगी है। इसमें बिल गेट्स को उद्धृत् करते हुए अक्तूबर 2009 को 'वर्ल्ड फूड प्राइज' के अवसर पर कृषि विशेषज्ञों को उनके संबोधन के ये शब्द दुहराए गए हैं कि ''आप जिस लक्ष्य के प्रति समर्पित हैं, उसकी ओर दुनिया का ध्यान गया है।'' वे स्वयं भी कृषि के क्षेत्र में उदारतापूर्वक दान दे रहे हैं। इसी व्याख्यान में बिल गेट्स ने अन्य कृषि विधियों के साथ–साथ भूख के विरुद्ध संघर्ष में और खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए बायोटैक फसलों को अपनाने का समर्थन किया है। नवंबर 2009 में रोम में आयोजित 'वर्ल्ड फूड समिट' में भी यही बात पूरा जोर देकर कही गई और विश्व की खाद्य समस्या पर यह शिखर सम्मेलन सन् 2002 के सात साल बाद आयोजित किया गया था, क्योंकि अब दुनिया को इस बारे में फिर से चेताने की जरूरत महसूस की गई। सन् 2008 में दुनियाभर में खाने–पीने की चीजों की महंगाई इतनी ऊंची उछल गई कि तीस देशों में मानवीयता इतनी गिर गई कि रोटी को छीनाझपटी को लेकर दंगे भड़क गए और दो देशों हाइती और मैडागास्कर में तो सत्ता ही पलट गई। तब सारी दुनिया यह अच्छी तरह समझ गई कि देश, जाति और रंग कोई भी हो, भूख हर बच्चे, औरत और मर्द को उतना ही सताती है। जब उसे रोज की रोटी भी नसीब नहीं हो पाती तो तमाम नैतिक मूल्यों को ताख में रहकर इंसान हैवान भी बन सकता है। मनुष्य की जिजीविषा उसकी सबसे बड़ी थाती है। महंगाई की मार गरीबों पर ही पड़ी, अमीरों पर नहीं, क्योंकि इस खाद्य संकट से पहले भी वे गरीब अपनी गाढ़ी कमाई से अधपेट खाकर भूखे ही रह रहे थे और मंहगाई से कीमतें दूनी–चौगुनी चढ़ गई तो उनके लिए अधपेट रोटी जुटा पाना भी दूभर हो गया। अमीर तो अपने शानदार व्यंजनों पर अपनी आमदनी का 20 प्रतिशत भी खर्च दें तो उन्हें कोई फर्क नही पड़ता, जबकि गरीब को हाड़तोड़ मेहनत के बाद कमाई गई पूंजी का 70 से 80 प्रतिशत तक बस एक दिन की रोटी पर खर्चना पड़ता है। विशेषज्ञों ने तो चेतावनी दी हैं कि अगर विकास फंड बांटने वाली अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों ने अपनी कंजूसी नहीं छोड़ी और खाद्य के मामले में असुरक्षित देशों ने अपने यहां खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने पर ध्यान नहीं दिया, तो सन् 2008 जैसी महंगाई फिर सिर उठा सकती है। सन् 1974 में जब रोम में पहली 'वर्ल्ड फूड समिट' आयोजित की गई थी, तो अमरीका के अर्थशास्त्री और राजनेता हेनरी किसिंगर ने घोषणा की थी कि अब से दस साल बाद दुनिया में एक भी बच्चा भूखा नहीं सोएगा, लेकिन आज उसके 35 साल बाद सन् 2009 में हम देखते हैं कि फिर से 'वर्ल्ड फूड समिट' होने और संयुक्त राष्ट्र के सहस्राब्दी विकास देशों में 2015 तक दुनिया की भूख और गरीबी में आधी कटौती करने का बीड़ा उठाने के बाद भी, दुनिया में पहली बार 100 करोड़ से अधिक (102 करोड़) लोग भूखे ही सो जाते हैं (वर्ल्ड फूड प्रोग्राम, यू एन 2009)। विश्व बैंक ने हिसाब लगाया है कि सन् 2008 और 2010 के बीच दुनिया में सवा डालर (लगभग 60–65 रुपये) प्रतिदिन पर गुजारा करने वाले लोगों की संख्या में 890 लाख लोगों की बढ़त हो जाएगी और जिनकी प्रतिदिन की आमदनी केवल दो डालर के बराबर यानी कोई 90 रुपये प्रतिदिन होगी, उनकी संख्या इन तीन सालों में 12 करोड़ बढ़ जाएगी। असल में तो विकासशील देशों में अधिकतर गरीबों को रोजाना इतनी दिहाड़ी भी नहीं मिलती।

यों तो जुलाई 2009 में जी–8 गुट के अमीर देशों ने खाद्य समस्या को सुलझाने के लिए विकासशील देशों को 20 अरब डालर देने का वायदा किया है, जो काफी लगता है और खाद्य–सुरक्षा के साथ–साथ खाद्यान्न में देशों की आत्मनिर्भरता सुनिश्चित करने पर बल देना भी स्वागत योग्य है। लेकिन यहां यह भी महत्वपूर्ण है कि ये 20 अरब डालर पहले के फंडों में से बचा–खुचा मिलाकर नहीं, बल्कि उनके अलावा नए फंड के रूप में मुहैया किए जाएं। यह भी ध्यान देने की बात है कि इस फंड से केवल तीन साल तक, प्रतिवर्ष 7 अरब डालर की दर से आर्थिक सहायता दी जाएगी। साथ ही इस फंड से ऐसे कदम उठाने होंगे कि जलवायु–परिवर्तन के दुष्प्रभावों से कृषि की रक्षा हो सके। परंतु फिर भी इस फंड के अलावा विश्व के प्रमुख समाजसेवी

''व्यापारिक बायोटैक/जीएम फसलों का वैश्विक स्तरः 2009''

संगठन और नागरिक समाजों को कृषि में उनका योगदान बढ़ाने से लिए अधिक वित्तीय साधन उपलब्ध कराने होंगे, जिनमें उनको ऋण प्रदान करना भी शामिल है। कुछ कदम उठाए भी जा रहे हैं। विश्व बैंक ने सन् 2009 में कृषि में अपना योगदान 50 प्रतिशत अधिक बढ़ाकर 6 अरब डालर कर दिया, राष्ट्रपति ओबामा ने अमरीकी संसद में कृषि के लिए सहायता देने वाले 'यू एस ऐड' संगठन का बजट 2010 में दुगना बढ़ाकर एक अरब डालर करने का प्रस्ताव भेजा है। संयुक्त राष्ट्र के महासचिव के कार्यालय में कृषि के लिए एक 'उच्च स्तरीय कार्यबल' स्थापित किया गया है। साथ ही विख्यात अर्थशास्त्री डा. जैफी साक्स ने एक 'अंतर्राष्ट्रीय मैगा फंड' बनाने की सलाह दी है, ताकि विश्व–कृषि में पूंजी निवेश की कमी न आए। यह मेगा फंड वैसा ही होना चाहिए, जैसा कि 'एच आई वी/एड्स' के नियंत्रण के लिए जुटाया गया है। लेकिन अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उठाए और सुझाए जा रहे कदमों से भी ज्यादा महत्व इस बात का है कि इन दानदाता कुबेरों से भी बढ़कर प्रत्येक विकासशील देश में यह चेतना जागी है कि वे राष्ट्रीय स्तर पर नीतिगत तथा प्रौद्योगिकी संबंधी कार्यक्रम बनाएं और उन्हें पूरी लगन से लागू करें। अफ्रीकी देशों ने सन् 2003 में यह संकल्प किया था कि वे अपने बजट का 10 प्रतिशत कृषि पर खर्च करेंगे और वे अब उसका पालन करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। इनमें से मलावी का उदाहरण बड़ा उल्लेखनीय हैं कि वहां उस देश के जी डी पी का 4.2 प्रतिशत कृषि में निवेश किया गया और उससे पिछले चार सालों में उनके यहां मक्का की उपज चौगुनी बढ़ गई। इसी तरह और भी देश बीजों तथा उर्वरकों पर सब्सिडी दे रहे हैं और उसे बढ़ा रहे हैं। मलावी पहले अपनी आवश्यकता का 40 प्रतिशत खाद्यान्न 2005 में बाहर से आयात करता था और 2009 में अपने खाद्य–उत्पादन का 50 प्रतिशत निर्यात करने लगा। मलावी अफ्रीका के उन प्रमुख देशों में शामिल है, जो अपने यहां मक्का की उपज और भी ऊंची ले जाने के लिए प्रतिबद्ध हैं, जैसा कि दक्षिण अफ्रीका ने बीटी मक्का जैसी बायोटैक फसल को अपनाकर सफलतापूर्वक कर दिखाया है। अब तो बीटी मक्का विश्व के 15 देशों में सफलतापूर्वक उगाई जा रही है। अफ्रीका के उप–सहारा क्षेत्र में 30 करोड़ लोग सफेद मक्का खाकर ही अपना पेट भरते हैं।

जब अनेक खाद्य–उत्पादक देशों ने सन् 2008 की महंगाई से उपजे खाद्य संकट के दौरान अपने यहां खाद्यान्नों के निर्यात पर पाबंदी लगा दी, तो धान्य की कमी लेकिन धन की प्रचुरता वाले अमीर देशों ने अन्य देशों में खेती की जमीन को पट्टे पर लेना शुरू किया। पिछले कुछ सालों में खाद्यान्न की कमी होने की आशंका से निपटने के लिए ये देश अतिरिक्त खाद्यान्न की आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए खेती योग्य भूमि का अधिग्रहण कर रहे हैं, ताकि दूसरे देशों में उगाया गया अन्न बिना किसी रुकावट के अपने देश में ला सकें। उदाहरण के लिए खाड़ी के छह देशों ने मिलकर एक 'गल्फ कोऑपरेशन कौंसिल' गठित की है, जो हर साल सामूहिक रूप से 10 अरब अमरीकी डालर के मूल्य के खाद्यान्न बाहर से आयात करते हैं। वे अब अफ्रीका में एक नई 'ब्रैडबास्कट' या कहें कि 'अन्न का कटोरा' बनाने की कोशिश कर रहे हैं। इसके लिए अफ्रीका के जो देश चुने गए हैं, वे हैं : मोजाम्बिक, सेनीगल, सूडान, तंजानिया और ईथोपिया। ईथोपिया की केंद्रीय सांख्यिकी एजेंसी ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि ईथोपिया में 133 लाख छोटी जोत वाले किसान कुल मिलाकर 10 लाख हैक्टर में विदेशियों के लिए नई खेती योग्य जमीन तैयार कर रहे हैं (द इकोनोमिस्ट 2009ए)। इस सिलसिले के आलोचक इसे खाद्य–असुरक्षा से पीड़ित देशों का 'भूमि हथियाने' का षडयंत्र बता रहे हैं, क्योंकि अपने यहां वे अब खेती योग्य जमीन बढ़ा नहीं सकते और उनकी बहुत–सी जमीन कई तरह से खेती के काबिल नहीं रही तथा पर्यावरण से जुड़ी समस्याओं की शिकार है।

सन् 2008 की विश्व बैंक की विकास–रिपोर्ट में इस बात पर बल दिया गया है कि **''संयुक्त राष्ट्र के सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों में से 2015 तक घोर दरिद्रता और भूख से पीड़ित लोगों की संख्या आधी कम करने के प्रथम लक्ष्य की पूर्ति के लिए कृषि का विकास सबसे महत्वपूर्ण साधन है।'' (वर्ल्ड बैंक, 2008)।** इस रिपोर्ट में यह बताया गया था कि विकासशील देशों में प्रत्येक चार व्यक्ति में से तीन व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं और उनमे से अधिकतर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपनी आजीविका के लिए कृषि पर ही निर्भर हैं। इसमे यह माना गया है कि **अफ्रीका में अधिकतर खेती महिलाओं के कंधों पर है और वहां लाखों किसान जैसे–तैसे गुजारा करके घोरतम दरिद्रता का जीवन बिता रहे हैं और उपसहारा–क्षेत्र के इन लोगों को गरीबी से तभी उबारा जा सकता है, जब यहां की कृषि–उत्पादकता में एक जबरदस्त क्रांति लाई जाए।** लेकिन इस रिपोर्ट में इस सच्चाई पर भी ध्यान खींचा गया है कि एशिया की तेजी से वृद्धि कर रही अर्थव्यवस्थाओं वाले विकासशील देशों में भले ही समृद्धि बढ़ रही हो, लेकिन वहां भी 60 करोड़ के करीब ग्रामीण निहायत गरीबी में जिंदगी बिता रहे हैं जबकि उप–सहारा क्षेत्र के अफ्रीकी देशों में इनकी संख्या कुल मिलाकर 80 करोड़ है। अगले कई दशकों तक लाखों ग्रामीणों की जिंदगी पर गरीबी की काली छाया मंडराती रहेगी। यह भी कटु सत्य है कि विश्व की 70 प्रतिशत आबादी में गांवों में बसे छोटे और साधनहीन किसान और भूमिहीन मजदूर हैं और वे कड़ी मेहनत से जमीन से कुछ उपजाने की कोशिश में लगे रहते हैं। सबसे विकट चुनौती यह है कि ''किस तरह आपदा को अक्सर में बदला जाए'' ताकि कृषि–क्षेत्र में व्याप्त गरीबी को कम करने के लिए गरीब और साधन हीन किसान अपने दीर्घ अनुभव को औद्योगिक देशों में प्रचलित उन्नत प्रौद्योगिकी से जोड़कर कृषि की उत्पादकता बढ़ाएं और गरीबी के चंगुल से बाहर आएं। इन औद्योगिक देशों ने अपनी कृषि–उत्पादकता और आमदनी बढ़ाने के लिए बायोटैक फसलों को सफलतापूर्वक अपनाया है, और यही प्रौद्योगिकी गरीबी मिटाने का सबसे बड़ा औजार बन सकती है, जैसा कि विश्व बैंक ने अपनी रिपोर्ट में बताया है। इस रिपोर्ट में लिखा है कि जैव–प्रौद्योगिकी और सूचना विज्ञान में आई क्रांति विकास को ऐंड़ लगाने के लिए अनूठा अवसर प्रदान करती है। लेकिन विश्व बैंक ने यह चिंता भी जताई है कि फसलों में तेजी से अपना स्थान बढ़ाती जैव–प्रौद्योगिकी विकासशील देशों से छूट सकती है, क्योंकि उसके लिए आवश्यक राजनीतिक इच्छा और अंतर्राष्ट्रीय सहायता अभी नजर नहीं आती। खासतौर से बायोटैक/जी एम फसलों के विवादास्पद पक्षों पर छाई धुंध साफ होनी चाहिए, जिसके बारे में 'आई एस ए ए ए' भी अपनी रिपोर्ट में बार–बार ध्यान खींच चुका है। इस समय सबसे **विकट चुनौती** यही

है कि परंपरागत तकनीकों के साथ फसलों की जैव–प्रौद्योगिकी का उचित तालमेल बिठाकर सन् 2015 तक कम साधनों से टिकाऊ आधार पर खाद्य–उत्पादन को दुगना किया जाए।

उपसंहार और डा. नॉर्मन बोरलोग की विरासत

सन् 2009 की दो घटनाएं सबसे अलग उभरती हैं– पहली तो हमारे व्यक्तिगत मित्र और शांति के नोबल पुरस्कार विजेता डा. नॉर्मन बोरलोग का 12 सितंबर 2009 को निधन और दूसरी, 27 नवंबर 2009 को चीन की सरकार द्वारा बायोटैक धान और बायोटैक मक्का को स्वीकृति प्रदान करना। धान विश्व की सबसे महत्वपूर्ण फसल है और दुनिया की तीन अरब के करीब या लगभग आधी मानवता भूख मिटाने के लिए चावल पर ही निर्भर है और इसमें दुनिया के सबसे गरीब लोग भी शामिल हैं। इसी तरह मक्का पशुओं के आहार के लिए इस्तेमाल की जाने वाली विश्व की सबसे बड़ी फसल है। दुनिया के सबसे ज्यादा सूअर यानी 50 करोड़ चीन में रहते हैं, जो कि दुनिया की सूअरों की आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन सूअरों को मोटा करने के लिए और इनके अलावा चीन के 130 करोड़ मुर्गी, मुर्गे और बतखों के दाने के लिए मक्का का ही इस्तेमाल किया जाता है। चीन के नेतृत्व ने विश्व को पहली प्रमुख बायोटैक खाद्य फसल धान को स्वीकृति प्रदान करके बड़ी दूरदर्शिता का प्रदर्शन किया है और उन्होंने ऐसी प्रौद्योगिकी चुनी है जो खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता प्रदान करने में सबसे अधिक उपयोगी हैं। एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के देशों को इस बारे में चीन के आदर्श का अनुकरण करना चाहिए। इससे एक सुरक्षित, समृद्ध, न्यायपूर्ण और शांतिपूर्ण विश्व के निर्माण का मार्ग प्रशस्त होगा।

डा. नॉर्मन बोरलोग ने विश्व में हरितक्रांति के प्रसार में जो सफलता प्राप्त की उसके पीछे उनका एक ही लक्ष्य के प्रति पूर्णतः समर्पण की भावना और लगन से और एक ही निशाने पर निगाह रखने का बहुत बड़ा योग रहा और वह लक्ष्य था **''हर हाल में गेहूं की प्रति हैक्टर उत्पादकता बढ़ाना''।** उन्होंने केवल प्रयोगशाला के खेतों पर ही नहीं, बल्कि किसानों के खेतों पर कितनी उत्पादकता बढ़ी इसको मापना जरूरी समझा। साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर हुई पैदावार को भी अपनी सफलता की कसौटी माना। यही नहीं उन्होंने यह भी जानना जरूरी समझा कि गेहूं की पैदावार बढ़ने से विश्व में शांति बढ़ाने और मानव–कल्शाण में कितनी मदद मिली। अब से 40 साल पहले 17 दिसंबर 1970 को जब उन्हें शांति के नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया तो पुरस्कार स्वीकृत करते हुए उन्होंने जो व्याख्यान दिया, उसका शीर्षक था, **''हरितक्रांति, शांति और मानवता।''** 40 साल पहले डा. बोरलोग ने जो कहा वह आज भी प्रासंगिक है, लेकिन यह जरूर है कि अब नई चुनौतियां आ गई हैं, जिनसे इस लक्ष्य को प्राप्त करना बेहद जरूरी हो गया है। हमें कम संसाधन से, खासतौर से कम पानी, कम जीवाश्मी ईंधन और कम नाइट्रोजन से उत्पादकता दुगनी करनी होगी और वह भी खासतौर से जलवायु–परिवर्तन की चुनौती के संदर्भ में टिकाऊ आधार पर। मानव जाति के लिए डा. नॉर्मन बोरलोग की समृद्ध और अनूठी विरासत और उनको सम्मान देने का, उनकी स्मृति को अमर रखने का यही तरीका हो सकता है कि बायोटैक फसलों से जुड़ा मानव–समुदाय एकजुट होकर विश्व में आसन्न **विकट चुनौती** का सामना करे। उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम सभी दिशाओं के देश आपसी भेदभाव भूलकर, सरकारी और निजी क्षेत्र दोनों मिलकर, कम संसाधनों से अधिकतम उत्पादन की बायोटैक फसलों की संभावना को साकार करने के इस महान अभियान में भाग लें। हमारा लक्ष्य भी वही होना चाहिए, जो संयुक्त राष्ट्र ने अपने सहस्राब्दी विकास लक्ष्य में रेखांकित किया है कि 2015 तक विश्व को गरीबी, भूख और कुपोषण के कलंक से मुक्त किया जाए। संयोग से यह लक्ष्य बायोटैक फसलों के व्यापारीकरण के 2006 से 2015 तक के दशक की समाप्ति के वर्ष से जुड़ा है।

इसका उपसंहार हम 30 वर्षों से अपने व्यक्तिगत मित्र और 'आई एस ए ए ए' के प्रथम संस्थापक–संरक्षक डा. नॉर्मन बोरलोग को समर्पित एक कविता की पंक्तियों से कर रहे हैं। यह बोरलोग ही थे, जिन्होंने विश्व की कोई एक अरब आबादी को भुखमरी से बचाया था और जो बायोटैक फसलों के प्रबल समर्थक थे, क्योंकि वे यह मानते थे कि फसलों की उत्पादकता बढ़ाने तथा गरीबी, भूख और कुपोषण का उन्मूलन करने की बायोटैक फसलों में अपार क्षमता है और वे विश्व में शांति और मानव–कल्याण में अपूर्व योगदान कर सकती हैं। डा. बोरलोग ने कहा था, ***''पिछले एक दशक से हम पौधों की जैव–प्रौद्योगिकी की सफलता को देखते आए हैं। यह प्रौद्योगिकी अधिक पैदावार लेने में दुनिया के किसानों की मदद कर रही है और साथ ही कीटनाशियों के इस्तेमाल और मिट्टी के कटाव को भी कम करती है। विश्व की आधी से अधिक जनसंख्या वाले देशों में पिछले एक दशक से जैव–प्रौद्योगिकी के लाभ और इसकी निरापदता पुष्ट हो चुकी है। अब जरूरत इसकी है कि उन देशों में जहां किसान अब भी पुरानी और कम कारगर कृषि विधियों को अपनाने के लिए मजबूर हैं, वहां के राजनेता साहस दिखाएं और इस प्रौद्योगिकी की राह सुगम बनाएं। पहले हरितक्रांति और अब पादप जैव–प्रौद्योगिकी खाद्यान्न के उत्पादन की बढ़ती मांग को पूरा करने में और साथ ही पर्यावरण को भी भावी पीढ़ी के लिए सुरक्षित रखने में हमारी सहायता कर रही है।''***

''जिसे दूसरों ने माना कि है समझदारी।
उन्होंने उनसे अधिक दुनिया संवारी।।
दूसरों के सच से बड़ा था उनका सपना।
सुरक्षितों से बढ़ा लिया जोखिम अपना।।
जो की आशा वह उन्होंने पाकर दिखाया।
वह था, जो असंभव को संभव करने आया।।''

आईएसएएए
इंटरनेशनल सर्विस फॉर
द एक्विजिशन ऑफ
एग्रोबायोटैक एप्लीकेशंस

आईएसएएए एसएशिया सेण्टर
राष्ट्रीय कृषि विज्ञान केन्द्र, देव प्रकाश शास्त्री मार्ग
टोडापुर, नई दिल्ली.110012

टेलीफोनः +91 11 32472302 • फैक्सः +91 11 25841294
URL: http://www.isaaa.org

आईएसएएए संक्षेप सं. 41–2009 की प्रति प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें, ई–मेल b.choudhary@cgiar.org